नूतन निष्काम पत्रिका

नूतन निष्काम पत्रिका ❒ वर्ष-४ ❒ अंक-६ ❒ मुम्बई ❒ जून - २०१३ ❒ मूल्य-रु.९/-

मान्नीय डॉ. श्री रामप्रकाश जी को
गुरुकुल कांगडी विश्वविद्यालय के कुलाधिपति
नियुक्त किये जाने पर हार्दिक बधाई एवं अभिनन्दन !

किनके हृदय में प्रभु की ज्योति का प्रकाश होता है

आचार्य भद्रसेन

1. **योगी के हृदय में ही प्रभु के दर्शन होते हैं-** जो सत्य भाव (सच्चे हृदय) से धर्म का अनुष्ठान कर, योग का अभ्यास करते हैं, उनके ही हृदय में परमात्मा प्रकाशित होता है।

- ऋग्वेदभाष्य 7.38.2

2. **ब्रह्म को कौन जान सकता है-** जो मनुष्य ब्रह्मचर्य आदि व्रत, सदाचार, विद्या, योगाभ्यास, धर्म का अनुष्ठान, सत्संग और पुरुषार्थ से रहित हैं, वे जन अज्ञान-रूप अन्धकार से दबे हुए होने के कारण ब्रह्म को नहीं जान सकते। और जो सर्वान्तर्यामी, सबका नियन्ता और सर्वत्र व्याप्त है, उसको जानने के लिए जिनका आत्मा पवित्र है वे ही योग्य होते हैं। अन्य नहीं।

- यजुर्वेदभाष्य 17.31

3. **शरीर की पुष्टि तथा आत्मा और अन्त:करण की शुद्धि प्रभु प्राप्ति का साधन है-** हे मनुष्यो ! तुम लोग धर्म का आचरण, वेद और योग के अभ्यास, तथा सत्संग आदि कर्मो से शरीर की पुष्टि और आत्मा तथा अन्त:करण की शुद्धि को सम्पादन कर सर्वत्र अभिव्याप्त परमात्मा को प्राप्त होके सदा सुखी होवो।

- यजुर्वेदभाष्य 32.11

4. **परमात्मा किसे मिलते हैं-** वह परमात्मा अधर्मात्मा, अविद्वान्, विचार-शून्य, अजितेन्द्रिय, ईश्वर-भक्ति रहित जनों से बहुत दूर है। अर्थात् वे कोटि-कोटि वर्षो तक भी उसको नहीं प्राप्त होते। और वे तब तक जन्म मरण आदि दु:ख सागर में भटकते फिरते हैं कि जब तक उस (परमेश्वर) को प्राप्त नहीं होते। किन्तु सत्यवादी, सत्यकारी, सत्यमानी, जितेन्द्रिय, सर्वजनोपकारक, विद्वान्, विचारशील पुरुषों के अत्यन्त निकट हैं। वे सबके आत्माओं में अन्तर्यामीरूप से व्यापक होकर पूर्ण हो रहे हैं वह (प्रभु) आत्मा का भी आत्मा है उससे तिल मात्र भी स्थान खाली नहीं है, क्योंकि वह अखण्डैक रस होकर सब में व्यापक हो रहा है। उसी को जानने से सुख और मुक्ति मिलती है। अन्यथा नहीं।

- आर्याभिविनय

5. **हम उस प्रभु को क्यों नहीं जानते-** हे जीवो ! जो परमात्मा इन सब भुवनो के रचनेवाला विश्वकर्मा है, उसको तुम लोग नहीं जानते, क्योंकि तुम अविद्या से अत्यन्त आवृत्त होकर मिथ्यावाद और नास्तिकपन में फंसकर मिथ्या बकवाद करते फिरते हो। इससे तुमको दु:ख ही मिलेगा, सुख कदापि नहीं। तुम लोग केवल स्वार्थ साधक (बनकर) शरीर पोषण मात्र में ही प्रवृत्त हो रहे हो, और केवल विषय भोगों के लिए ही अवैदिक कर्म करने मैं प्रवृत्त हो रहे हो। और जिसने सब भुवन रचे हैं, उस सर्वशक्तिमान् न्यायकारी परमात्मा से उल्टे चलते हो इसीलिए उस प्रभु को तुम नहीं जान सकते।

-आर्याभिविनय

6. **भगवान् किसको अपने आनन्द से पूर्ण करते हैं-** जो सब जगत् का पिता है, वही अपने उपासकों को ज्ञान और आनन्द आदि से परिपूर्ण कर देता है। परन्तु जो मनुष्य सच्ची प्रेम भक्ति से परमेश्वर की उपासना करेंगे, उन्हीं उपासकों को परम कृपामय अन्तर्यामी परमेश्वर मोक्ष सुख देके सदा के लिए आनन्द युक्त कर देंगे।

- ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, उपासनाप्रकरण

7. **परमेश्वर की प्राप्ति किसे नहीं होती-** यह उपासना-योग दुष्ट मनुष्य को कभी सिद्ध नहीं होता। क्योंकि जब तक मनुष्य दुष्ट कामों से अलग होकर अपने मन को शान्त और आत्मा को पुरुषार्थी नहीं बनाता, तथा भीतर के व्यवहारों को शुद्ध नहीं करता, तब तक कितना ही पढ़ें अथवा सुनें, उसको परमेश्वर की प्राप्ति कभी नहीं हो सकती।

-ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, उपासनाप्रकरण

8. **परमात्मा के राज्य में कौन प्रवेश करते हैं-** जो मनुष्य धर्माचरण से परमेश्वर और उसकी आज्ञा (पालन) में अत्यन्त प्रेम करके अरण्य अर्थात् शुद्ध हृदय रूपी वन में स्थिरता के साथ निवास करते हैं, और जो लोग अधर्म के छोड़ने और धर्म के करने में दृढ़ तथा वेदादि सत्य विद्याओं के विद्वान् हैं..... वे मनुष्य ही प्राण द्वार से परमेश्वर के सत्य राज्य में प्रवेश करके, और सब दोषों से छूट के परमानन्द मोक्ष को प्राप्त होते हैं।

- ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, उपासनाप्रकरण

9. **परमात्म ज्योति का प्रकाश कहाँ पर होता है-** कण्ठ के नीचे दोनों स्तनों के बीच में और उदर के ऊपर जो हृदय देश है, जिसको ब्रह्मपुर अर्थात् परमेश्वर का नगर भी कहते हैं। उसके बीच में जो सर्वशक्तिमान् परमात्मा बाहर भीतर एक रस होकर रम रहा है। वह आनन्द स्वरूप परमेश्वर उसी प्रकाशमय स्थान के बीच में खोज करने से मिल जाता है। दूसरा उसके मिलने का कोई उत्तम स्थान या मार्ग नहीं है।

-ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, उपासना प्रकरण

10. **पुरुषार्थी पुरुष को परमेश्वर शीघ्र प्राप्त होता है-** परमेश्वर अत्यन्त दयालु है, अत: जो जीव उसकी प्राप्ति के लिए तन, मन, धन से श्रद्धापूर्वक पुरुषार्थ करता है परमात्मा उसको शीघ्र ही प्राप्त होता है।

- सत्यार्थप्रकाश, प्रथम संस्करण, समुल्लास 9

प्रभु भक्त दयानन्द से साभार

❀❀❀

आर्य समाज सांताक्रुज, मुम्बई का मासिक मुखपत्र
वर्ष : ४ अंक ६ (जून-२०१३)

- दयानंदाब्द : १९०, विक्रम सम्वत् : २०७०
- सृष्टि सम्वत् : १,९६,०८,५३,११४

प्रबन्ध संपादक : चन्द्रगुप्त आर्य
संपादक : संगीत आर्य
सह संपादक : संदीप आर्य
कार्यकारी संपादक : विनोद कुमार शास्त्री
लालचन्द आर्य, रमेश सिंह आर्य,
यशबाला गुप्ता.

विज्ञापन की दरें : शुल्क

- पूरा पृष्ठ : रु. ३,०००/-
- एक प्रति : रु. ९/-
- १/२ पृष्ठ : रु. २,०००/-
- वार्षिक : रु. १००/-
- १/४ पृष्ठ : रु. १,५००/-
- आजीवन : रु. १०००/-
- विशेषांक की दरें भिन्न होंगी ।

वर्गीकृत विज्ञापन
रु. १०/- प्रति शब्द, न्यूनतम रु. ५००/-
चैक /डीडी / मनी आर्डर आदि 'आर्य समाज सान्ताक्रुज' के नाम से ही भेजें, मुंबई के बाहर के चैक न भेजे। विज्ञापन सामग्री १० तारीख तक भेजें। 'नूतन निष्काम पत्रिका' का मुद्रण ऑफसेट विधि से होता है।

पत्ता : आर्य समाज सांतक्रुज़
(विठ्ठलभाई पटेल मार्ग) लिंकिंग रोड, सांताक्रुज़ (प.), मुंबई -५४ फोन : २६६० २८००, २६०० २०७५

अनुक्रमणिका	पृष्ठ सं.
सम्पादकीय	३
किनके हृदय में प्रभु की ज्योति	२
यही वह ब्रह्म है	४-५
कन्या भ्रूण हत्या ...	६
आसनों के द्वारा रोगों के उपचार	७-८
भूत और प्रेत	८
''वृष्टि-यज्ञ पर संगोष्ठि''	९
सम्पदा संस्कारों की	१०
ईश्वर प्राप्ति के सोपान	११
सृष्टिसंवत् सत्तानव करोड़ वर्ष है	१२-१३
भारतवासियों के सुख का आधार,.....	१४
हम ऐश्वर्य की चोटी पर चढ़ जाएँ	१५
मोटापे पर नियन्त्रण के उपाय -	१६

सम्पादकीय

महर्षि और स्वाध्याय

महर्षि दयानन्द सरस्वती के आगमन से पूर्व तथाकथित हिन्दुओं का धर्म के नाम पर जो शोषण हो रहा था, उसपर महर्षि ने अपने समय में एक रेखा खींचकर स्पष्ट किया कि वैदिक धर्म ही हम सबका मूल है। धर्म के नाम पर चल रहे जातिवाद, अंधविश्वास एवं आम आदमी का तथाकथित धार्मिक क्रिया - कलापों का सिर्फ पालन करने का कार्य रहा गया था।

तथाकथित धार्मिक कर्म- काण्डों को करने का अधिकार सिर्फ तथाकथित ब्राह्मणों को ही था। जिसका जन्म ब्राह्मण परिवार में हुआ यह सब उसका जन्म सिद्ध अधिकार हो गया।

आर्यो में व्याप्त इन्हीं कुरीतियों के खिलाफ महर्षि दयानन्द ने वैदिक धर्म की ओर लौटने का शंखनाद किया। वेद - उपनिषद - दर्शन - मनुस्मृति आदि आर्ष ग्रन्थों के माध्यम से आपने निराकार ईश्वर की स्तुति- प्रार्थना- उपासना करने का निर्देश दिया। **जन्मना जायते शूद्रः** अर्थात् जन्म से सभी शूद्र हैं। आचार्य के पास शिक्षा ग्रहण करने के पश्चात् ही आचार्य शिक्षार्थी को ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र आदि के योग्य उन्हें बताता था। यह सामाजिक व्यवस्था ठीक वैसी थी जैसी आज हमें Directors, Managers, Officers, Clerks आदि के भेद में दिखायी देती है। ब्राह्मण ने अपने पुत्र को योग्य न होने पर भी ब्राह्मण ही मनाना चाहा। वैसे ही आज हम देखते हैं कि योग्यता न होने पर भी कई Doctor आदि अपने पुत्र को Doctor ही बनाना चाहता है। परिणामतः व्यवस्था में विकृति, कुरीतियाँ आने लग जाती हैं। पुत्र मोह से बड़े-बड़े कमजोर हो गये हैं। अस्तु !

महर्षि ने रेखा खींची इसका तात्पर्य यह है कि तथाकथित धर्म के नाम पर कोई भी क्रिया आर्य लोग आँख बंदकर स्वीकार कर रहे थे। महर्षिं ने पुनः स्मरण कराया कि वैदिक धर्म का पालन करो। जहाँ वेद मन्त्रों को पढ़ने का अधिकार सिर्फ ब्राह्मणों तक सीमित था, वहीं स्वयं जन्मना ब्राह्मण होते हुए भी महर्षि ने समस्त मानव जाति को वेद मन्त्र पढ़ने और उसके अर्थो का चिन्तन-मनन-क्रियान्वयन जीवन में करने का निर्देश दिया। आर्य समाजों में प्रति रविवार वेद मन्त्रों के स्वाध्याय पर बल दिया। यही स्वाध्याय की वृत्ति आर्यों को अन्यों से अलग करती है और निरन्तर ज्ञान-वृद्धि का मार्ग प्रशस्त करती है। तो आइये ! महर्षि द्वारा दिखाये रास्ते को अपनाते हुए हम स्वाध्याय में रूचि लें और न सिर्फ अपना बल्कि समस्त आर्य जनों को ज्ञानवर्धक कल्याणकारी मार्ग पर ले जायें। सत्यार्थ प्रकाश में भी महर्षि ने प्रत्येक आर्य को स्वाध्याय के निर्देश दिये हैं, जिससे विद्वान वक्ता भी स्वाध्याय करके सही ज्ञान प्रचारित कर सके।

- संगीत आर्य
९३२३५ ७३८९२

यही वह ब्रह्म है

डॉ. बलदेव सहाय

उपनिषदों का मुख्य विषय है परम सत्ता ब्रह्म का विवेचन। साथ ही इनमें सृष्टि की उत्पत्ति, जीवात्मा और परमात्मा का विश्लेषण, संसार की रूपरेखा आदि से सम्बन्धित विषयों की भी विशद चर्चा की गई है। सृष्टि सत् से हुई या असत् से, सृष्टि से पूर्व कोई सत्ता थी या नहीं, थी तो वह कौन-सी सत्ता थी और उसका विस्तार कैसे हुआ? यदि वह सत्ता सत्यं ज्ञानमनन्तम् है और उसको जानने से ही हम सब-कुछ जान सकते हैं, हमारी सारी इच्छाएँ पूरी हो सकती हैं हमारी आनन्द की खोज समाप्त हो जाती है और हम परमानन्द के भागी बन जाते हैं, तो उस सत्ता को कैसे जाना जा सकता है इस पर भी प्रत्येक उपनिषद् ने अन्य विषयों के साथ अपने-अपने ढंग से प्रकाश डालने का प्रयत्न किया है। कोई कहता है कि जब तक आप संसार से जुड़े रहोगे, आप पर अविधा आच्छादित रहेगी, आप किसी भी विषय का सच्चा मूल्यांकन करने में असफल रहोगे, इसलिए यदि आप परा विद्या का, ब्रह्मज्ञान का, स्वाद लेना चाहते हैं तो सब-कुछ छोड़कर संन्यास लें और पूर्ण वैराग्य का जीवन अपनाकर निरन्तर ब्रह्म की जानकारी में लग जाएँ। यह तो सभी उपनिषदों का मत है कि पढ़ने-लिखने से, अनेक ग्रंथों को चाट जाने से अथवा तर्क-वितर्क से ब्रह्म को जानने में कोई सहायता मिलनेवाली नहीं है। जब **भगवान् सनत्कुमार** को महर्षि नारद ने अपनी शिक्षा का, अध्ययन का विवरण दिया तो वे प्रभावित नहीं हुए और उन्होंने कहा कि ''हे नारद, तुझे 'शब्द-ज्ञान' तो अपार हैं, पर केवल उसीसे, 'आत्म-ज्ञान' नहीं होता, इसी कारण तू सब विद्याओं को जानने के बाद भी अशान्त है। ब्रह्मज्ञान तो किसी ब्रह्मवेत्ता के पास बैठकर, जैसे गुरु ने 'ऊस' को जाना है, उसका पत्ता लगाने से ही होता है।'' अत: संत-समाज को अपनाओ और गुरु के श्रीमुख से उस ज्ञान को प्राप्त करो। क्योंकि भारत में कितने ही ब्रह्मवेता हुए हैं, और भगवान् की कृपा से आज भी हैं, और उन्होंने अलग-अलग मार्ग द्वारा यह ज्ञान प्राप्त किया है, इसलिए प्रत्येक ने अपने-अपने निजी अनुभव की व्याख्या की है। किन्हीं-किन्ही के अनुभव मिलते-जुलते हो सकते हैं इसलिए आप पुनरावृत्ति भी पाएँगे, फिर भी उनका जानना लाभदायक है, क्योंकि क्या पता अपने-अपने संस्कारों के आधार पर किसे कौन-सी युक्ति भा जाए और वह उसे धारण कर परमानन्द का भागी बन जाए।

कठोपनिषद् की चौथी वल्ली में ब्रह्म का विवेचन किया गया है। सृष्टिकर्ता ने हमारी इन्द्रियों को बहिर्मुखी बनाया है, वे उन्नीस इन्द्रियाँ- **एकोनविंशति मुखः-** बाहर की ओर जाती हैं। प्रश्न उठ सकता है कि स्वयंभू तो सब कर सकता है, फिर उसने हमारी इन्द्रियाँ अन्तर्मुखी क्यों नहीं बना दीं? सारा झंझट ही समाप्त हो जाता। न हम विषयों की ओर भागते, न कर्म-बन्धन के शिकार होते और न संसार में कुछ दु:ख होता। हम सदैव अन्तर्मुखी हो ब्रह्म में लीन रह सकते थे। पर यदि ऐसा होता तो सृष्टि का विकास ही नहीं होता, संसार चलता ही नहीं। हम सब ब्रह्मलीन परमानन्द में डूबे रहते। सृष्टि का प्रयोजन ही समाप्त हो जाता। आज स्थिति यह है कि इन्द्रियाँ अपने-अपने विषयों की ओर जाती हैं। जब उन्हें मनचाहा मिल जाता है तो सुख अनुभव होता है, नहीं मिलता या मिलकर छूट जाता है तो दु:ख होता है। हम राग-रंजित या द्वेष-दूषित रहते हैं और जैसा कर्म करते हैं वैसा फल भोगते हैं। अच्छा या बुरा कर्म करना हमारे हाथ में है, फल हमारे बस में नहीं है- **कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन। (गीता-I-47)** अच्छा कर्म करने के लिए पुरुषार्थ की, कुछ तपस्या और जद्दोजहद की जरूरत है। एक कवि की पंक्ति याद आती है-

इन आबलों से पाँव के घबरा गया था मैं।
दिल खुश हुआ है रास्ता पुरखार देखकर ।।

अर्थात् मेरे पैरों में छाले पड़ गए थे, उनको देखकर मैं कुछ घबरा गया था; पर जब मैंने देखा कि रास्ते में काँटे (खार) बिछे हुए हैं तो मैं खुश हो गया हूँ। क्या जोश है, कैसी जौलानी है, कितना महान् पुरुषार्थ है ! अरे, मैं पैर के आबलों से (छालों से) डर गया था, लेकिन अब तो मार्ग पुर-खार-काँटों से भरा हुआ है, अब होगी मेरे साहस की परीक्षा ! मैं काँटों से, रुकावटों से, घबरा नहीं रहा हूँ, खुश हो रहा हूँ क्योंकि यह मेरे सामर्थ्य की और भी बड़ी चुनौती है।

इन्द्रियाँ बहिर्मुखी हैं। उनको अन्तर्मुखी करने के पूर्व हमें सबसे पहले यह भलीभाँति समझ लेना है कि इनकी अपनी कोई स्वतंत्र सत्ता नहीं है। मन और प्राण इनके नियामक अवश्य हैं, परन्तु इन सब का अस्तित्व आत्मा के कारण है। यह तथ्य हम सब जानते हैं, पर जीते बहुत कम हैं। यह समझने में तो हमें विशेष कठिनाई नहीं होती कि मनोयोग के बिना कोई भी इन्द्रिय ठीक-ठीक काम नहीं कर पाती-आँख देखती नहीं, कान सुनते नहीं इत्यादि। जब **स्वामी विवेकानन्द** 1893 में अन्तर्राष्ट्रीय धार्मिक संसद में भाग लेने शिकागो गए, उन्होंने किसी उच्च पदाधिकारी का आतिथ्य स्वीकार कर लिया। वह महिला स्वामी जी से अत्यन्त प्रभावित थीं और उन्होंने किसी विशिष्ट व्यक्ति को उनसे भेंट करने आमंत्रित किया। स्वामी जी मेज पर पड़ी एक पुस्तक पढ़ने लगे। अतिथि आ गए। महिला ने कई बार स्वामी जी का ध्यान आकृष्ट किया, पर वे पुस्तक में डूबे हुए थे। जब उन्होंने पुस्तक पुन: मेज पर रख दी तो महिला ने उलाहना दिया कि ''मैंने तो कई बार आगन्तुक के आ जाने की सूचना दी, पर आपने अनुसुनी कर दी।'' स्वामी जी ने भरपूर क्षमायाचना की और कहा कि उन्होंने बिल्कुल नहीं सुना क्योंकि उनका मन पुस्तक पढ़ने में लगा था। महिला ने साधारण ढंग से कहा : ''तो बताइए पुस्तक का क्या मुख्य संदेश है?'' तब स्वामी जी ने उस पुस्तक की इतनी सटीक व्याख्या की कि जिसे वह महिला कई बार पढ़ने पर भी हृदयंगम नहीं कर सकी थी। जब मन कहीं और होता है तो सुनाई नहीं देता, दिखाई भी नहीं देता। हम

सब यहाँ तक तो समझते हैं, पर उसके आगे यह भूल जाते हैं कि मन की भी अपनी कोई स्वतन्त्र सत्ता नहीं है, वह भी आत्मा के तेज से ही प्रकाशित है। यह जो रूप, रस, गंध, शब्द, स्पर्श, मैथुन को चला रहा है, यदि आत्मा अपना हाथ खींच ले तो इन सबका सारा ज्ञान लोप हो जाएगा। वस्तुत: वही वास्तविक सत्ता हैं-

येन रूपं रसं गन्धं शब्दान् स्पर्शांश्च मैथुनान्।
एतेनैव विजानाति किमत्र परिशिष्यते, एतद्वै तत्।। (II-4.3)

एतद् वै तत्- निश्चय से यह प्रेरक ही वह ब्रह्म है।

माण्डूक्योपनिषद् का कथन यहाँ पुन: दूसरे प्रकार से कहा गया है कि जो तत्त्व जाग्रत, स्वप्न तथा सुषुप्ति तीनों अवस्थाओं से समान रूप से गुज़रता है, तीनों अवस्थाओं का जाननेवाला है- यह तत्त्व ही ब्रह्म है। मनुष्य इस रहस्य को समझ लेता है वह आत्मा की विभूति को जानकर शोकरहित हो जाता है, परमानन्द को प्राप्त कर लेता है- एतद् वै तत्। विषय-भोग की मधु-जैसी मिठास में कटुता निहित रहती है, पर जिसने ब्रह्मज्ञान की मिठास चख ली है वह उत्तरोत्तर और भी अधिक मीठी होती चली जाती है। या यों कहना चाहिए कि वह मधु के समान है, जहाँ से स्वाद लो मीठा ही होगा। वास्तव में ब्रह्मज्ञान की विभिन्न मात्राएँ नहीं। या तो वह होता है, या नहीं होता। जब एक बार हमारी निजी चेतना परम चेतना से मिल जाती है, वह स्थिति अनिर्वचनीय है। उसमें द्वैत की, किसी अन्य वस्तु-विषय-व्यक्ति की चेतना हो ही नहीं सकती। हमने अभी तक कभी उसकी अनुभूति नहीं की है, केवल अनुमान ही लगा सकते हैं। जब नरेन ने **स्वामी रामकृष्ण परमहंस** से ईश्वर के दर्शन कराने का आग्रह किया तो उन्होंने नरेन दत्त को केवल छू दिया। उस दैवी स्पर्श के बाद लगभग एक पखवाड़े तक वह अबोध युवक संसार की समस्त वस्तुओं को एक अद्‌भुत रूप में देखता हुआ आनन्द-सागर में डुबकियाँ लगाता रहा और आगे चलकर **स्वामी विवेकानन्द** बन सारे विश्व पर छा गया। उन्होंने उन पन्द्रह दिनों की स्थिति का जो वर्णन किया है, ब्रह्मज्ञान के बाद कुछ ऐसी ही दशा होती है- सब-कुछ एकरस केवल चेतना ही चेतना का, अस्तित्व का, 'मैं हूँ' का ज्ञान, और कुछ नहीं।

जैसे अरणियों में अग्नि होती है पर दीखती नहीं, जैसे गर्भिणी का गर्भ सुरक्षित होता है पर दीखता नहीं, उसी तरह आत्मा में परमात्मा बैठा है पर वह दिखाई नहीं देता। जैसे गर्भिणी सदैव अपने गर्भ का ध्यान रखती है, उसी प्रकार परमात्मा को भी आत्मा की चिन्ता रहती है। परमात्मा अंगुष्ठमात्र प्रत्येक मानव के हृदय में सदैव विद्यमान है। यहाँ एक बात स्पष्ट कर दें- कई उपनिषदों में अंगूठे जितने ब्रह्म के हृदय की गुफा में रहने की बात कही गई है, इसको प्रतीकात्मक मानना चाहिए। शरीर के अन्य भाग क्या ब्रह्म से ओत-प्रोत नहीं हैं? क्योंकि ब्रह्म पर ध्यान जमाते समय सारे शरीर का ध्यान करना कठिन हो सकता है, इसलिए अनुमानत: उसके रहने का एक विशिष्ट स्थान निश्चित कर दिया गया जिससे ध्यान लगाने में आसानी हो। दुसरे, ब्रह्म केवल शरीर में ही नहीं है, सर्वत्र व्याप्त है। उसके अनगिनत शीर्षस्थान अथवा ज्ञानकेन्द्र हैं। उसके दिव्यचरण पृथ्वी की सीमा को पार कर दशों दिशाओं में फैले हुए हैं, पर इस विराट रूप से तो कोई भी घबरा जाएगा, इसलिए व्यावहारिक रूप से उस अंगुष्ठमात्र ब्रह्म को मानव- शरीर की हृदय-गुहा में बताया गया है। **ऋग्वेद** का यह मन्त्र देखिए-

सहस्त्रशीर्षा पुरुष: सहस्त्राक्ष: सहस्त्रपात्।
स भूमिं सर्वतस्पृत्वात्यतिष्ठत् दशांगुलम्।।
(ऋक्-X-90)

श्री सत्यकाम विद्यालंकार द्वारा इसका काव्यमय रूपान्तर इस तरह है-

प्रभु का है अनन्त विस्तार, द्यावा-पृथ्वी के उस पार
सर्वव्यापक परमपुरुष के, शत सहस्त्र हैं शीर्ष नयन;
दशों दिशाओं के अनन्त में, विचरण करते दिव्य चरण।
प्रभु का है अनन्त विस्तार, द्यावा-पृथ्वी के उस पार।
('वेद पुष्पांजलि' से)

जो मानव इस ग्यारह द्वार वाले शरीर में ऐसे रहता है जैसे जल में हंस रहता है- निर्लिप्त, नि:संग-वह अपने अनुष्ठान से शोक में नहीं पड़ता और जब शरीर छोड़ता है तब जीवन-मृत्यु के चक्कर से सदा के लिए मुक्त हो जाता है। **एतद्वै तत्**- आत्मा का यही रूप है। वैदिक साहित्य में मानव-शरीर को नौ द्वार की नगरी से बार-बार उपमा दी गई है। वे नौ द्वार हैं- दो आखें दो कान, दो नथुने एक मुख, गुदा और उपस्थ। श्वेताश्वतर उपनिषद् में भी यही कहा गया है (III-18) **गीता** के पाँचवें अध्याय में भी **नवद्वारे पुरे देही** की चर्चा की गई है। **कठोपनिषद्** में तालु औरं नाभि को मिलाकर ग्यारह द्वार बताए गए हैं। **महर्षि महेश योगी** का कहना है कि "एक संन्यासी जीवन में जो कुछ होता है वह देखता मात्र है, कोई तनाव खड़ा नहीं करता। यह आत्मज्ञान अथवा योग के अभ्यास द्वारा सम्भव है।" **डॉ. राधाकृष्णन के शब्दो में :** "कोई भी मनुष्य केवल धन अथवा विद्वता से सन्तुष्ट नहीं हो सकता। उसे अपने-आपको किसी परमशक्ति के आदेश को कार्यान्वित करने का निमित्त-मात्र जानकर त्याग एवं वैराग्य-भावना को दृढ़ करना चाहिए।" जो अपने मन की शान्ति के लिए बाहरी सहारों पर- धन-दौलत यश-ख्याति आदि- आश्रित रहते हैं उनको कभी शान्ति नसीब नहीं होती। शान्ति, आनन्द, संतोष अन्दर है, बाहर नहीं, और वह आत्मज्ञान द्वारा सहज ही मिल सकता है। नित्यों में वही एकमात्र नित्य है, चेतनों में वही एकमात्र चेतन है, अनेकों में वही एक है, हमारी कामनाएँ उसी के द्वारा फलित होती हैं। उसका वास आत्मा के भीतर है। उसे जो पुरुष देख पाते हैं, समझ पाते हैं, उन्हीं को चिरशान्ति, परमानन्द प्राप्त होता है, दूसरों को नहीं। (V-13)

इस प्रकार **कठोपनिषद्** में बड़े सरल ढंग से आत्मा और परमात्मा का विवेचन किया गया है तथा और भी कितनी उपमाओं द्वारा उस सत्ता के स्पष्टीकरण का प्रयत्न किया है। पर यह तो शब्दज्ञान है; इसकी सहायता से अभ्यास एवं वैराग्य द्वारा हमें अपने दैनिक जीवन में जीना है।

❀❀❀

॥ ओ३म् ॥
कृण्वन्तो विश्व मार्यम्

बेटी बचाओ-देश बचाओ-धर्म बचाओ !

कन्या भ्रूण हत्या देश में कलंक है !
कन्या भ्रूण हत्या जघन्य अपराध है ।

कन्या भ्रूण हत्या करने वाले ।
माता-पिता डा. साहब मेरा क्या कसूर?

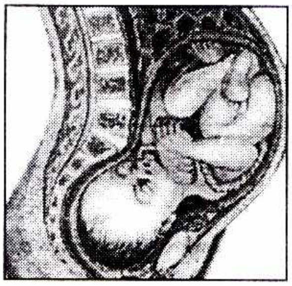

भ्रूण हत्या भविष्य की हत्या अविलम्ब बंद हो!

कन्या भ्रूण हत्या राष्ट्र की हत्या है !
कन्या भ्रूण हत्या घोर महापाप है ।

कन्या के ही गर्भ से आये हो ।
दुनिया में आने से पहले मारते हो ।।

कन्या भ्रूण हत्या एक ऐसा पाप जिसका कोई प्रायश्चित नहीं

सज्जनों,

समाज में स्त्री-पुरुष राष्ट्र का एक अंग है विकास का महत्त्वपूर्ण सूचक है। नर तथा नारी किसी एक के कमी होने पर सृष्टि कार्य नहीं चल सकता। महामहिम पूर्व राष्ट्रपति **श्री अब्दुल कलाम** ने अपनी वेदना व्यक्त करते हुए कहा है- ''समाज एक पक्षी है और नर तथा मादा इस पक्षी के दो पंख है। यह पक्षी उड़ नहीं सकेगा यदि उसका एक पंख कतर दिया जाता है।'' आज हमारे देश में यह जघन्य अपराध हो रहा है प्रसवपूर्व निदान तकनीकि चिकित्सा तंत्र की महत्त्वपूर्ण खोज है, किन्तु यह खोज लिंग जाँच का एक अपवित्र साधन बन गई है। यही कारण है कि भारतीय संसद को इस दुरूपयोग पर रोक लगाने हेतु प्रसवपूर्व निदान तकनीकि (विनियमन और दुरूपयोग निवारण) अधिनियम १९९४ पारित करना पड़ा। यह अधिनियम सम्पूर्ण देश में १ जनवरी१९९६ से निरन्तर लागू है। भारत सरकार ने उक्त अधिनियम में आवश्यक संशोधन करके दिनांक ०४-०२-२००३ से गर्भधारण से पूर्व और प्रसवपूर्व निदान तकनीकि (लिंग चयन प्रतिषेध) अधिनियम १९९४ रखा।

गर्भधारण पूर्व और प्रसवपूर्व निदान तकनीकि (लिंग चयन प्रतिषेध) अधिनियम १९९४ के अन्तर्गत गर्भ धारणपूर्व या बाद लिंग चयन और जन्म से पहले कन्या भ्रूण हत्या के लिए लिंग परीक्षण करना, करवाना, इसके लिए सहयोग देना व विज्ञापन करवाना कानूनी अपराध हैं, जिसमें उसे ५ वर्ष तक जेल व १० हजार से १ लाख रुपये तक जुर्माना हो सकता है।

सरकार द्वारा कानून बना दिया गया। क्यों सरकार कानून बनाने तक ही सीमित है। घोर अपराध हो रहा है, फिर भी सरकार के खुफिया तंत्र निष्क्रिय एवं अनजान है।

मानवता के नाते सोंचे कि भ्रूण हत्या करना-करवाना मनुष्यवृति है या निशाचरी प्रवृति (अजन्मा भ्रूण जो अभी विकसित भी नहीं हो पाया हो उसने क्या अपराध किया है? जिसे जन्म से पहले माँ के गर्भ में मारा दिया जाता है। अत: मानव समाज से निवेदन है कि अपना निजी स्वार्थ से हटकर सोंचे कि हम क्या कर रहे हैं इस कर्म से राष्ट्र का भविष्य क्या होगा।

सिर्फ कानून बनाना सर्वपरि नहीं है, कानून का पालन करना सर्वपरि है। नैतिक, चरित्रता के अभाव में दुष्कर्म हो रहा है, प्रमुख रुप से तीन जिम्मेवार है सृष्टि की सन्तुलन को बरवाद करने वाला एक गर्भवती का परिवार, दूसरा डाक्टर, तीसरा कानून का रक्षक प्रशासन सरकार, जब तक यह तीनों मानव धर्म नहीं निभायगा तब तक यह शर्मनाक दुष्कर्म होता रहेगा सृष्टि की सन्तुलन बिगारते ही रहेगे। यदि सच में मानव है तो सत्य को अपनाने में असत्य को छोड़ने में ही मानव धर्म है।

असतो मा सद्गमयय, तमसो मा ज्योर्तिगमय

निवेदक: कामता प्रसाद आर्य, आर्य समाज आरा- भ्रूण हत्या-गो हत्या निवारण समिति भोजपुर, आरा

आसनों के द्वारा रोगों के उपचार
(किन रोगों में कौन से आसन करना उपयोगी होता है।)

1. **अग्रिमांद्य-** मत्स्यासन, बज्रासन, पद्मासन, पश्चिमोत्तासन, धर्नुआसन, भुजंगासन, उष्ट्रासन, चक्रासन, सर्वांगासन।
सुझाव- चाय, तम्बाखू, बीड़ी, सिगरेट एकदम छोड़ देवें।
2. **आमाशयिक विकार-** धनुर्रासन।
3. **उदर विकार-** हलासन, भुजंगासन, शलभासन। सुझाव - पेट के रोगियों को सप्ताह मे एक बार एनिमा लेना चाहिए।
4. **उदर रोग-** धनुरासन, भुजंगासन, शलभासन।
5. **कटिविकार-** धनुरासन, शलभासन।
6. **कष्टार्तव -** सर्वांगासन, हलासन।
7. **कुष्ट-** दुग्धाहार के साथ नियमित सर्वांगासन, शिर्षासन, पद्मासन, सिद्धासन, सिंहासन, गोमुखासन, वक्रासन, वृषासन।
8. **कब्ज-** ताड़ासन, भुजंगासन, शलभासन, पश्चिमोत्तासन, पवनमुक्तासन, हलासन, मयूरआसन, मत्स्यासन, पादहस्तासन, मूलबंध।
9. **कामेंद्रिय का अल्प विकास-** सर्वांगासन, भुजंगासन, उड्डियान वंध, शशांकासन, हनुमानासन।
10. **कीड़े -** नौकासन।
11. **खाँसी-** वज्रासन, भस्त्रिका।
12. **पीठ व गर्दन के विकार-** भुजंगासन, हलासन, अर्धमस्त्येंद्रासन।
13. **गले के रोग-** सिंहासन, मत्स्यासन, सुप्तवज्रासन, सर्वांगासन।
14. **गुर्दा रोग-** पश्चिमोत्तासन, शशांकासन, भुजंगासन, धनुरासन, हलासन, गोमुखासन।
15. **गठिया वात-** पवनमुक्तासन, पश्चिमोत्तासन, हलासन, गोमुखासन, त्रिकोणासन, धनुरासन।
16. **झुर्रियाँ-** योगमुद्रा (गालो को फुलाकर)
17. **तीव्र रक्त चाप-** सिद्धासन, पद्मासन, मत्स्यासन, शवासन, पवनमुक्तासन, शशांकासन, वज्रासन।
18. **क्षय व दमा-** सिद्धासन, शीर्षासन, सर्वांगासन, मत्स्यासन, अर्ध-मस्त्येंद्रासन, सुप्तवज्रासन, भुजंगासन, शवासन, भस्तिका। सुझाव-बीड़ी, सिगरेट, चाय, मिर्च, मसाले, तली चीज एकदम बंद एवं एनीमा के बाद पश्चिमोत्तानासन कीजिए।
19. **ध्वजभंग-** सर्वांगासन, योगमुद्रा, पश्चिमोत्तानासन।
20. **पतलेदस्त-** हलासन व मूलवंध।
21. **पाचनक्रिया-** वज्रासन, भुजंगासन, ताड़ासन, योगमुद्रा, शलभासन, गोमुखासन, सर्वांगासन, पश्चिमोत्तानासन, वद्धपद्मासन।
22. **पेट के विकार-** शशांकासन, पादहस्तासन, धनुरासन, हलासन, पवन मुक्तासन, उड्डियान बंध।
23. **पैर जाँधे -** वीरासन, वज्रासन, पद्मासन।
24. **पेट का धाव-** भुजंगासन, धनुरासन, शशांकासन, सुप्तवज्रासन, पश्चिमोत्तानासन, गोमुखासन।
25. **मधुप्रमेह-** सिद्धासन, शीर्षासन, सर्वांगासन, मत्स्यासन, अर्ध मस्त्येंद्रासन, हलासन, चक्रासन, मयूरासन एवं त्रिकोणासन।
26. **योग उर्ध्वीकरण –पायरिया एवं पेट की पीड़ा–** सिद्धासन, शीर्षासन, सर्वांगासन, मत्स्यासन, अर्ध मत्येंद्रासन, पद्मासन, वज्रासन, पश्चिमोतानासन।
27. **आँख, कान व नाक का दर्द -** सिद्धासन, सर्वांगासन, मत्स्यासन, अर्ध मस्त्येद्रासन।
28. **नष्टार्तव, पीड़ीतार्तव, प्रदर, गर्भासय और बीजाशय के रोग–** सर्वांगासन, शलभासन, पश्चिमोत्तानासन, भुजंगासन।
29. **क्रोनिक ब्राकाइटीज, कफ का सश्वास–** मत्स्यासन व शलभासन।
30. **यकृत व प्लीहा की वृद्धि –** सर्वांगासन, हलासन, मयूरासन, वद्धपद्मासन।
31. **अन्तर्गल, श्लीपद, हाथ पाँव का छोटा होना -** गरुड़ासन, त्रिकोणासन, उत्कटासन।
32. **बवासीर (अर्श)-** सिद्धासन, पश्चिमोत्तासन, शीर्षासन, गोमुखासन, महामुद्रा।
33. **पेचिस व मरोड़ -** वद्ध पद्मासन, कुकुटासन।
34. **संधिवात-** वृश्चिकासन, शीर्षासन, पश्चिमोत्तानासन, सर्वांगासन।
35. **मोटापा-** मंडूकासन, पश्चिमोत्तानासन, मयुरासन, सुप्तवज्रासन, धनुरासन, अर्धमत्स्येंद्रासन।
36. **लो ब्लड प्रेसर-** सर्वांगासन, हलासन, वज्रासन, पद्मासन, सिद्धासन, पश्चिमोत्तानासन।
37. **सरदर्द -** पश्चिमोत्तानासन, हलासन, सर्वांगासन, शवासन।
38. **हार्निया (आंत्रवृद्धि) -** मत्स्यासन, सर्वांगासन, सुप्तवज्रासन।
39. **हृदय रोग-** शवासन, वद्धपद्मासन, सिद्धासन।
40. **अनिद्रा-** सर्वांगासन, शवासन, सूर्य नमस्कार।
41. **मासिक धर्म-** धनुरासन, मत्स्यासन, सुप्तवज्रासन,

पश्चिमोत्तानासन।

42. **अतिनिद्रा-** लोलासन, कुकुटासन, उत्तमागासन, वकासन, तोलासन, उत्थित एक पाद सिरासन।

43. **आंतो के रोग-** लोलासन, गर्भासन, वद्धपद्मासन, सूर्य नमस्कार।

44. **चर्म रोग-** पद्मासन, सिद्धासन, सिंहासन, वीरासन, उत्कटासन, मंडूकासन, सुप्त वज्रासन, वृक्षासन।

46. **फेफड़े व सीने के रोग-** वद्धपद्मासन, उत्कटासन, सर्वांगासन, विपरीतकरणी, शीर्षासन, वृक्षासन, सूर्य नमस्कार।

47. **ज्वर व जीर्ण ज्वर-** गर्भासन, उत्थित पद्मासन, सिंहासन, गोमुखासन, शवासन।

48. **नपुसंकत्व-** पद्मासन, सिद्धासन, सिंहासन, मंडूकासन, वज्रासन, सुप्तवज्रासन, गोमुखासन।

49. **नाड़ियों की अशुद्धि-** लोलासन, उत्थित एक पाद शिरासन।

50. **पैर के रोग-** वद्धपद्मासन, उत्कटासन, आकर्णधनुरासन, तोलांगुलासन, पद्मासन।

51. **पथरी-** मस्त्येन्द्रासन, मत्स्यासन, तोलागुलासन, वज्रासन।

52. **लकवा (पक्षाघात)-** पद्मासन, वीरासन, पर्वतासन, मस्त्येंद्रासन, मत्स्यासन, सिद्धासन, सिंहासन, मंडूकासन।

53. **पित्तरोग-** हलासन, वृत्तासन, शलभासन।

54. **मुर्च्छा (वायु) हिस्टीरिया-** पद्मासन, वक्रासन, अर्ध मस्त्येंद्रासन, वृषासन, मंडूकासन, वज्रासन।

55. **रक्तपित्त (गलित कुष्ट)-** पद्मासन, मस्त्येंद्रासन, सिद्धासन, सिंहासन, गोमुखासन, वीरासन।

56. **रक्त विकार, रक्तक्षय-** लोलासन, कुकुटासन, वकासन, उत्कटासन, सर्वांगासन, शीर्षासन, वृक्षासन।

57. **फील पाँव -** मस्त्येंद्रासन, उत्कटासन, एक पाद शिरासन।

58. **बवासीर-** पश्चिमोत्तानासन, पवनमुक्तासन, योग मुद्रासन, भू-नमन, मंडूकासन, शशांकासन, गोमुखासन।

सुझाव - (चोकर + अरंडी तेल + दूध में पीवे) तेल, मसाले, खटाई एकदम बंद। (1) 10 से 20 ग्राम धनियाँ बीज + 10 ग्राम मिश्री में पानी डालकर उबाल कर दिन में दो बार पिलाने से खून रुक जायेगा। (2) हड़य + गिलोय + धनियाँ बराबर भाग मिलाकर चार गुना पानी में उबालें, 75% पानी समाप्त हो जाय तब गुड़ मिलाकर सेवन करें।

नोट- (1) सभी को सब आसन करना जरूरी नहीं, जो सुविधा जनक हो सके उसी को करना चाहिए। (2) आसन प्रात: शौच के बाद खाली पेट ही किये जाने चाहिए।

-स्वामी राजेन्द्र योगी सरस्वती

❀❀❀

भूत और प्रेत

दुर्भाग्य से वैदिक-धर्म के अन्दर भूत-प्रेत की विकट समस्या है। आर्य-समाज की इस सम्बन्ध में भी अपनी निश्चित धारणा है। हमारे वैदिक-धर्म में यह समस्या कभी थी ही नहीं। यह तो ईसाई और मुसलमानों के सहकार से हमारे अन्दर आयी है। ईसाई और इस्लाम सम्प्रदाय के अन्दर खुदा और शैतान दो समानान्तर शक्तियाँ मानी जाती हैं। कभी-कभी तो शैतान की महत्ता खुदा से भी बढ़ जाती है और वह शैतान के समक्ष पराभूत समझा जाता है। उन्हीं की देखादेखी हमारे अन्दर भी यह दोष आ गया अन्यथा पवित्र वैदिक-धर्म इससे सर्वथा मुक्त था। आर्यसमाज भूत और प्रेत को नहीं मानता क्योंकि भूत-प्रेत की कोई सत्ता है ही नहीं। भूत और प्रेत जिसे कहते हैं, वह हमारे लिये दु:ख अथवा सुख का कारण नहीं हो सकता। वेद और वैदिक-धर्म विश्वविश्रुत पुनर्जन्म के सिद्धान्त में विश्वास रखता है और यह मानता है कि जीवात्मा एक शरीर से निकलकर अत्यल्प काल में दूसरी योनि में चला जाता है। शरीर भस्म होकर राख बन जाता है अथवा जिनका शरीर गाड़ा व फेंका जाता है उसे कीड़े और मांसाहारी प्राणी खाकर समाप्त कर देते हैं। जीव उधर गया, शरीर की यह दशा हुई। तीसरी कोई वस्तु होती नहीं, तब भूत किस चीज से बनेगा। अत: आर्यसमाज इस पर विश्वास नहीं करता। हाँ, भूत और प्रेत शब्द अवश्य हैं पर उनका अर्थ कुछ और होता है। संस्कृत भाषा में 'भूत' और 'प्रेत' दोनों शब्द हैं, जिसे लोक-भाषा में 'मुर्दा' कहा जाता है उसे ही संस्कृत भाषा में 'शव' अथवा 'प्रेत' कहते हैं। प्रेत 'मुर्दा' का नाम है। जो लोग उस प्रेत को उठाकर श्मशान तक ले जाते हैं, उन्हें संस्कृत भाषा में प्रेताहार अर्थात् प्रेत (शव) का ढोनेवाला कहते हैं। वहीं प्रेत जब चिता पर जलाकर राख कर दिया जाता है और उसका कुछ भी अंश अवशिष्ट नहीं रह जाता तब उसे भूत कहते हैं। भूत का अर्थ है 'था परन्तु अब नहीं रहा'' जब रहा ही नहीं तब उससे भय अथवा कष्ट प्राप्ति की सम्भावना करना कोरी मूर्खता ही है। इसलिये आर्यसमाज की मान्यता में भूत और प्रेत की मान्यता सर्वांश में मिथ्या और कोरी कल्पना है। आर्यसमाज प्रत्येक मनुष्य को यह परामर्श देता है कि वह एक सर्वथा भ्रान्त और मूर्खतापूर्ण भावना में अपना विश्वास जमा कर मानवता की छवि धूमिल न करें। आर्यसमाज की यह दृढ़ मान्यता है कि मरणोपरान्त आत्मा की दो ही अवस्थायें हो सकती हैं। या तो वह अपने शुभ कर्मों और तत्त्वबोध की सहायता से मोक्ष प्राप्त कर ईश्वर के सान्निध्य में रह आनन्द का उपभोग करे अथवा शरीर छोड़ने के पश्चात् परमात्मा की व्यवस्थानुसार किसी माता के पेट में जा दूसरा जन्म ले। तीसरी कोई भी स्थिति सम्भव नहीं, अत: भूत-प्रेत और शैतान की मान्यता न केवल मूर्खतापूर्ण अपितु मानवता पर कलङ्क है। भले लोगों का कर्त्तव्य है कि यथा-सम्भव शीघ्र इस कलङ्क से मुक्त होने की चेष्टा करें।

वैदिक विचार धारा

❀❀❀

''वृष्टि-यज्ञ पर संगोष्ठि''

१९ मई २०१३ को आर्य समाज चेम्बूर, मुम्बई में वृष्टि-यज्ञ संगोष्ठि का आयोजन किया गया। इस कार्यक्रम के आयोजन का मुख्य उद्देश्य था कि आम जनता को अवगत कराया जाए कि क्या यज्ञ द्वारा वृष्टि कराई जा सकती है? इस संगोष्ठि के लिए गुरूकुल येड्षी के संस्थापक एवं संचालक **आचार्य सुभाष जी** को विशेष रूप से आमन्त्रित किया गया था।

इस विषय पर सर्वप्रथम आर्य समाज सान्ताक्रुज़ के मन्त्री श्री सन्दीप आर्य ने अपने विचार प्रस्तुत किए। उन्होने बताया कि यज्ञ एक वैज्ञानिक सनातन क्रिया है, कोई मनगढंत बातें अथवा कोरी कल्पना नहीं है। उन्होंने बताया कि हवन कुण्ड में डाला गया घी एवं औषधियां वाष्प बनकर एवं सूक्ष्म होकर जब आसमान की ओर बढ़ने लगती हैं तब वे अपने साथ आसपास के वायुमण्ड्ल की नमी को भी उपर ले जाती हैं। ऊपर जाकर ठण्ड़ा तापमान पाकर धीरे धीरे सिकुडने एवं जमने लगती हैं। चूकि घृत ठण्डी पाकर जमना शुरू करता है तो अपने साथ की वायु के धुएं को भी सघन करता चला जाता है, यही सघनता धीमे-धीमे बादल का रूप धारण कर लेती है और अधिक बोझिल होने पर बरस पडती है। यह वर्षा कराने का एकदम सटीक तरीका है।

यज्ञ द्वारा वर्षा कराई जा सकती है, यह बात सुनने में झटपटी लगती है किन्तु पूर्णत्या सत्य है, प्रेक्टिकल है। वेदों में यज्ञ द्वारा वर्षा करवाने के अनेक मन्त्र आते हैं उदाहरणार्थ-

''तन्तवा यज्ञं बहुधा विसृष्टा''।
मित्रा वरूणौ त्वा वृष्ठ्यावताम्
कवी नौ मित्रावरूणा तुविजाता उरूक्षया।
यजा नो मित्रा वरूणा यजा देवां ऋतं बृहत्।
धृतेन द्यावापृथिवी पूर्येथाम्

यर्जुवेद में बड़ा स्पष्ट लिखा है। 'निकामे निकामे न पर्जन्यो वर्षतु' अर्थात जब जब हम इच्छा कर वर्षा करा सकते हैं इसीलिए यज्ञ को 'वर्षवृद्धम्' कहा गया है अर्थात वर्षा को बढ़ाने वाला। मनुस्मृति में भी लिखा है कि यज्ञ कुण्ड में डाली गयी आहुतियां सूर्य मण्डल तक पहुचंती हैं, उनसे बादल बनते हैं, बादल से वर्षा और वर्षा से अन्न और अन्न से प्रजा का जीवन चलता है। गीता में **श्री कृष्ण** ने कहा है कि यज्ञ से मेघ, मेघ से वर्षा और अन्न की उत्पत्ति होती है। **स्वामी दयानन्द सरस्वती** ने लिखा है- 'यज्ञ से जो भाप उठता है वह वायु एवं जन को निर्दोष करके जल को सुखी करता है।'

यह बात मात्र सैद्धन्तिक ही नहीं वरन प्रक्रियात्मक भी है यज्ञ द्वारा वर्षा करवाने का कार्य प्रत्यक्ष हुआ है, कैलिफोर्निया के मि. हॉटफील्ड ने कहा था- ''मैं आकाश से पानी बरसा सकता हूं'' और उन्होने नदिया के किनारे कुटिया बनाई और वे आग में कुछ ऐसे पदार्थ जलाते थे जिससे भाप सघन होकर बरसती थी इस प्रकार के उन्होने ५०० प्रयोग किए।

२००९ में आर्य समाज मन्दिर नरकटियागंज, बिहार में त्रिदिवसीय वृष्टि यज्ञ का आयोजन किया गया और यज्ञ के प्रथम दिवस से ही मूसलाधार बारिश होने लगी।

वृष्टि यज्ञ का दूसरा सफल प्रयोग ग्राम निनोरा (म.प्र.) में किया गया। वैदिक मिशन मुम्बई की ओर से वहां १८ से २१ अगस्त २००९ को यज्ञ का आयोजन किया गया। इस यज्ञ के ब्रह्मा थे येडसी गुरुकुल (महाराष्ट्र) के आचार्य श्री सुभाष जी। इस यज्ञ में वृष्टि में सहाय्यक समस्त अनेक ओषधियों (Herbs) को डाला गया। यज्ञ समाप्ति पर यज्ञ कुण्ड को पलाश के पत्तों से ढक दिया जिसका धुओं समस्त आकाश में आच्छादित हो गया और दो तीन दिन पश्चात तेज बारिश से समस्त गावं एवं आसपास के गावं तर हो गये। यह समाचार स्थानीय पत्र-पत्रिकाओं में भी छपा था।

यजुर्वेद में लिखा है हे मित्र और वरूण तुम दोनों वृष्टि से हमारी रक्षा करो। यह मित्र प्राण है और वरूण उदान है। प्राण को विज्ञान की भाषा में Oxygen कहते हैं और उदान को हम उद्जन कहकर पुकारते हैं जिसे अग्रेंजी में Hydrogen कहते हैं इन्ही दोनों तत्वों से जल का निर्माण होता है वृष्टि करवाने में इस दोनों तत्वों की आवश्यकता होती है। यज्ञ करने से इस दोनों तत्वों की वृद्धि होती है जिससे वर्षा होती है। वेद में आदेश दिया है- महान जलों के निर्माण हेतु मित्र और वरूण को हे अग्नि तुम संगत करो। यज्ञ में प्रयुक्त धृत एवं विशेष सामग्री अग्नि की सहायता से वायु में उक्त दोनों तत्वों का संयोग करवाती है जिससे वर्षा होती है।

यदि एक हजार नारियल के गोलों में गाय का घृत, शक्कर, शहद, मेवा, तिल, जौ आदि पदार्थों को भरकर उनको यज्ञ कुण्ड में 'ओ३म् स्वाहा' के उच्चारण के साथ डाली जाऐ तो मेघ उत्पन्न होकर बरसते लगते हैं।

यदि इस प्रकार से स्थान स्थान पर वृष्टि यज्ञ करवाए जाएं तो सूखा अकाल की नौबत नहीं आएगी और धरती लहलहा उठेगी। इससे वृष्टि तो होती ही है परन्तु प्रदुषण भी कम होता है।

तत्पश्चात आचार्य सुभाष जी ने भी वृष्टि- यज्ञ पर सहमति जताई। उन्होने बताया कि वे अब तक करीब २०-२५ वृष्टि - यज्ञ करवा चुके हैं और सब के सब यज्ञ वृष्टि करवाने में सफल सिद्ध हुए हैं। उनका मानना है कि जहां उक्त वस्तुएं वर्षा को लाने में सहायक होती हैं, वही सामूहिक मन्त्रोचारण भी इस प्रयोग में अहम् भूमिका निभाते हैं। चूकिं मन्त्रों में विशेष प्रकार की शक्ति होती है जो कि मेघ बनाने व बरसाने में मदद करती है।

श्री राजकुमार गुप्त ने कहा कि उनके पिता स्व. भगवती प्रसाद गुप्त, श्री मिठाईलाल सिंह (प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा मुम्बई) एवं अनेक महानुभावों ने आज से कई वर्ष पूर्व मुम्बई में वृष्टि यज्ञ का आयोजन किया था तथा वृष्टि करा कर इस सिद्धान्त को सत्य साबित कर दिखाया था।

कार्यक्रम के अंत में आर्य प्रतिनिधि सभा मुम्बई के मन्त्री श्री अरूण अबरोल ने समस्त आर्य समाजों से आए प्रतिनिधियों का धन्यवाद दिया तथा श्रीमती सुषमा चोपड़ा जी का हृदय से स्वागत किया जिसकी लगन एवं अथक प्रयास के कारण यह आयोजन सफल हो सका। उन्होने बताया कि वे अतिशीघ्र ही महाराष्ट्र में वृष्टि यज्ञ को करवाने का प्रयत्न करेगें ताकि सूखे से निजाद पाई जा सके।

पत्राचार पाठ्यक्रम

वैदिक मिशन मुम्बई जुलाई २०१३ से संस्कृत भाषा एवं गीता का पत्राचार पाठ्यक्रम प्रारम्भ करने जा रहा हैं। इसका वार्षिक शुल्क १००/- रखा हैं। इच्छुक पाठक निम्म पते पर सम्पर्क कर सकते है।

डॉ. सोमदेव शास्त्री (अध्यक्ष) ३०९ मिल्टन अपार्ट, जुहू कोलिवाडा मुम्बई ४०००४९. मो. ९८६९६६८१३०

संदीप आर्य - मंत्री - वैदिक मिशन मुम्बई - मो. ९९६९०३७८३७

* सम्पदा संस्कारों की *

यशबाला गुप्ता

''पूत सपूत तो का धन संचय
पूत कपूत तो का धन संचय''

जब हम छोटे हुआ करते थे तो अपने पिताजी से हमेशा यह मुहावरा सुना करते थे। पर इसके महत्त्व को तब कभी समझा नहीं पर समझ आई तो वे कोंनसे धन को अधिक महत्व देते थे? वह था चरित्र रूपी धन जो सदैव अक्षुन्न बना रहता है। धन दौलत की सार्थकता वही समझ सकता है जो सपूत है... कपूत तो जो कुछ है वह भी समाप्त कर देता है और सपूत अपने आप स्वयं ही धन अर्जित कर लेता है।

संस्कारों का जीवन में अत्यन्त महत्व है। संस्कारों से परिष्कृत मनुष्य ही द्विज कहलाते हैं अन्यथा संस्कार हीन व्यक्ति द्विज बनने के योग्य नहीं होते वे तो धन धान्य से सम्पन्न होकर भी शूद्र ही रहते हैं। संस्कारों के महत्व को मानवजाति के लिए अत्यंन्त उपयोगी मानते हुए आर्य समाज की स्थापना करने वाले स्वामी दयानन्द ने संस्कार विधि नामक पुस्तक लिखी। इस पुस्तक की भूमिका में लिखा कि जिसे करके शरीर और आत्मा सुसंस्कृत होने से धर्म अर्थ काम मोक्ष को प्राप्त कर सकते हैं और सन्तान अत्यन्त योग्य होती है। इसलिए संस्कार का करना सब मनुष्यों को अति उचित है।''

जिससे शरीर व आत्मा अलंकृत होते हैं उसे संस्कार कहते हैं। अब प्रश्न उठता है कि संस्कार कौन अलंकृत करता है? स्वामी जी के अनुसार बच्चे का निर्माण गर्भ में ही होना शुरू हो जाता है। एक सदाचारिणी उत्तम चरित्र वाली कुशल माँ, अच्छे वातावरण में रहकर धार्मिक कृत्यों को करते हुए एक स्वस्थ बच्चे को जन्म देती है। और समय समय पर अच्छे संस्कारों को घुट्टी की तरह बालक को पिला देती है। मॉ को निर्माता कहा गया है क्योंकि वच्चा गीली मिट्टी की तरह होता है कुंभार जैसा आकार देना चाहे उसे देता है। मॉ बच्चे को यदि ब्रह्म ज्ञानी बनाना चाहती है तो ब्रह्मज्ञानी बना सकती है। उसमें सात्विक विचार भरके संसार से विरक्त बना सकती है या वीर गाथाओं को सुना कर देश भक्ति की कहानियाँ कह कर वीर धीर बना सकती है। जैसा कि हम सुनते हैं कि रानी मदालसा ने शुद्धोअसि, बुद्धोअसि, निरंजनोडसि की लोरियाँ गाकर भोग विलस में पलने में झुलने वाले बच्चों को वैरागी बना दिया था फिर बाद में उन्हें राजकार्य संभालने के लिए वीरोडसि, धीरोडसि, सुराज्य भोक्ता की लोरियाँ गाकर वीर सन्तान को तैय्यार किया। इसीलिए वेदों में नारी को ''सुबूमा'' शिशुमति कहा अर्थात् सुंदर संस्कारित सन्तान उत्पन्न करने वाली।

इस संदर्भ में हमें यह भी समझना होगा कि बच्चे का निर्माण करने में माँ के साथ साथ पिता का व गुरु का व माहौल का भी योगदान रहता है, याद रखिए छोटा बच्चा अपने माँ बाप को अपना आदर्श मानता है। यदि माता पिता का परस्पर व्यवहार अच्छा है, प्रेम पूर्ण है, निष्कपट है और अपने बुजुर्गो को, विद्वानों को सम्मान देने वाला है तो बच्चा भी वैसा ही बनता है। यदि बच्चे को घर पर पूरा स्नेह और अच्छा वातावरण मिले तो वह पढ़ाई में भी होशियार होता है अच्छे अंक लाता है। घर का कलह पूर्ण वातावरनशा बच्चे की प्रगति में बाधक होता है। बच्चे में सुविचार भरना माता पिता गुरू सबका कर्तव्य होता है पर आज के माहोल में जबकी भाई को भाई नहीं समझता है बहिन को बहिन नहीं समझता तो इसके पीछे कहीं माता पिता की पैसे के प्रति भूख तो नहीं? डवल आय की चाह बच्चे को सुसंस्कारित करने में बाधक हो जाती है। क्योंकि उनके पास समय ही नहीं होता है बचेको संभालने का। एकल परिवारों के कारण बच्चे भी नौकरों के सहारे पलते हैं जो उनका पेट तो भर सकते हैं संस्कार नहीं भर सकते, कहते हैं कि बच्चा कुछ संस्कार अपने पूर्व जन्म से भी लेकर आता है। कभी कभी हम देखते है कि ३-४ साल का बच्चा अच्छे से अच्छा वाद्य बजा लेता है, वेद मंत्रों को कंठस्थ कर लेता है। कोई २ बच्चा बचपन से उद्दंड होता है, हिंसक होता है, मंद बुद्धि होता है ऐसे में उसे समालना उसे संस्कारित करना माता पिता व गुरू आचार्य का उत्तरदायित्व हो जाता है। बचपन में यदि बच्चा झूठ बोलता है, चोरी करता है मारपीट करता है, लूट खंसोट करता है तो यह कहकर कि बच्चा है कोई बात नहीं और टाल देना उसे और विगाड़ने में सहायक होता है। यदि समय पर ही उसे समझा कर, डॉट कर सही राह पर लाने का प्रयत्न किया जाए तो उसका सुप्रभाव पड़ता है वरना बच्चा भी बड़ा होकर यही कहेगा कि जब हम छोटे थे तब तो हमें कुछ नहीं कहा अब तो हमारी आदत बन गई है। इसका प्रभाव पूरी उम्र रहता है और समाज में अराजकता फैलाता है। वह चोरी चकारी करके बेइमानी करके या दूसरों को धोखा देकर अपना उल्लू सीधा करता है जिसका खामियाजा सबको भुगतना पड़ता है।

शिक्षा पद्धति में गुरुकुल प्रणाली को श्रेष्ठ माना जाता है। जहां पर बच्चे का सर्वांगीन विकास होता है। गुरुकुलों में अमीर गरीब का भेद नहीं होता सबका खाना पीना, रहन सहन, शिक्षा, अनुशासन एक समान होता है। जहां से विद्यार्थी समानता का, भाईचारे का, अनुशासित जीवन का पाठ स्वत: ही सीख जाता है। सोलह संस्कारों में समावर्तन संस्कार का वर्णन है जबकि गुरु शिष्य को उच्च शिक्षा द्वारा योग्य बनाता है तो अपने शिष्यों को परखने के लिए आश्रम से बाहर भेजता है। जब राह में कुछ कांच के टुकड़े पड़े मिलते हैं तो कुछ शिष्य कांच के टुकड़ों से बचकर निकलते है, कुछ खड़ाऊँ द्वारा कांच को दबा कर चलते हैं और कुछ कांच के टुकडो को उठाकर अलग करते हैं और दूसरों के लिए राह सुगम बनाते हैं। पहला शिष्य स्वार्थ भावना से युक्त है क्योंकि कांच से अपने को बचा कर चलता है। दूसरा शिष्य अभिमानी है वह कांच को कुचलकर चलता है जबकि तीसरा सहृदयी, परिश्रमी, परोपकारी भावना से युक्त है। सचमुच यही समाजं में रहने योग्य है। ऐसे शिष्य को ही सच्चा मानव कहलाने का हक है क्योंकि मानव निर्माण से ही राष्ट्र निर्माण होता है और संसार का भला होता है।

सार रूप में कहें तो माता पिता अपने बच्चों को धन दौलत भले ही न दें पर संस्कारों की सम्पदा से अवश्य मालामाल करें क्योंकि उसी से जीवन सुन्दर बनता है।

❀❀❀

ईश्वर प्राप्ति के सोपान

डॉ. मुमुक्षु आर्य

वेदों में प्रतिपादित ईश्वर प्राप्ति के विधि-विधान को बतलाते हुए महर्षि पतंजलि जी लिखते हैं कि चित्त की वृत्तियों का निरोध करने से योग की अर्थात् ईश्वर की सिद्धि करने से कालन्तर में जीव सब प्रकार के दु:खों से छूट कर परान्तकाल अर्थात् ३१ नील १० खरब ४० अरब वर्ष तक परम शान्ति , परम आनन्द को प्राप्त कर अपने मनुष्य जन्म को सफल कर सकता है। चित्त की वृत्तियों का निरोध न करने से जीव को अति हानि उठानी पड़ती है और करोड़ों वर्षों तक नाना प्रकार की योनियों में पड़कर नाना प्रकार के दु:खों और क्लेशों को भुगतना पड़ता है। अब इन चित्त की वृत्तियों का निरोध करने के लिए क्या करना होगा? मुख्यत: निम्न उपायों की चर्चा की गई है:- (वृत्तियाँ=प्रतिकूल विचार, समाधि में बाधक विचार).

१. विवेक	२. वैराग्य
३. अभ्यास	४. प्रणव का अर्थ सहित जाप
५. तीव्रलगन	६. मैत्री चतुष्ट्य
७. प्राणायाम	८. ईश्वर प्रणिधान

१. **विवेक**– स्वाध्याय, सत्संग व निरन्तर चिन्तन मनन से इस बात की समझ लगती है कि ईश्वर, जीव, प्रकृति का वास्तविक स्वरूप क्या है, साध्य क्या है, साधक क्या है, साधन क्या है, धर्म क्या है, अधर्म क्या है, कर्तव्य क्या है। अकर्त्तव्य क्या है, नित्य क्या है, अनित्य क्या है, पवित्र क्या है अपवित्र क्या है, आत्मा क्या है, अनात्मा क्या है, दु:ख किसमें है, सुख किसमें है। यथार्थ ज्ञान होने पर उसे व्यवहार में लाना ही विवेक है।

२. **वैराग्य**– विवेक हो जाने पर प्रकृति व प्रकृति से बने सब प्रकार के पदार्थों से मोह भंग हो जाता है इसी का नाम वैराग्य है।

३. **अभ्यास**– अभ्यास का मुख्य अर्थ है प्रात:, सायं कम से कम दो घंटा सुखासन आदि में बैठकर ईश्वर के गुणों का, ईश्वर के उपकारों का चिन्तन करना । कोई दूसरा शुभ या अशुभ विचार न आने देना । अत्यन्त सावधान होकर बैठना । जैसे पर्वत पर वाहन चलाते हुए चालक बड़ी सावधानी से वाहन चलाता है उसी प्रकार साधक मन रूपी वाहन को सावधानीपूर्वक चलाए । ईश्वर के अतिरिक्त विचार आते ही तुरन्त रोक कर ईश्वर की ओर ही लगा देना । अभ्यास का दूसरा अर्थ है जो कुछ विवेक द्वारा प्राप्त किया है उसे जीवन में क्रियान्वित करने का प्रयास करते रहना । त्रुटि हो जाने पर दण्ड लेना, पश्चाताप करना आदि । अभ्यास का तीसरा अर्थ है, योग के आठों अंगो विशेषकर यम- नियमों का दृढ़ता से पालन करना । स्मरण रहे जो कोई परमसत्ता ईश्वर की आज्ञाओं का उल्लंघन करता है वह बन्धन में पड़ जाता है, गिरफ्तार कर लिया जाता है, यम नियमों का उल्लंघन करना ईश्वर के कोप का भागी होना है । अभ्यास के लिए आवश्यक है कि यह लम्बे समय तक, लगातार, पूर्ण विश्वास, ब्रह्मचर्य, विद्या व तपस्यापूर्वक हो । इस प्रकार अभ्यास पक्का करने से साधक अपने लक्ष्य अर्थात् ईश्वर को प्राप्त कर सकता है ।

४. **प्रणव का अर्थ सहित जप**– करने से चित्त की वृत्तियों का निरोध होता है, मन शांत व एकाग्र होता है। प्रणव का अर्थ सहित जप- 'ओ३म् आनन्द' हे सर्वरक्षक ईश्वर ! आप आनन्द स्वरूप हैं आनन्द के देने वाले हैं मुझे अपने पुत्र को कृपा करके आनन्द प्रदान कीजिए । इस प्रकार ओ३म् का जप करते हुए मन ही मन इस तरह के भाव लाने से योग मार्ग में आने वाले समस्त विघ्नों-उपविघ्नों का नाश होता है और ईश्वर का साक्षात्कार होता है । इसके पीछे गहरा ज्ञान-विज्ञान कार्य करता है । जप से शरीरस्थ ग्रन्थियाँ अच्छा कार्य करने लगती हैं ।

५. **तीव्र लग्न**– करोड़ों वर्षों तक नाना प्रकार की योनियों में नाना प्रकार के दु:खों व क्लेशों को भोग कर यह मनुष्य देह प्राप्त हुआ है। सब प्रकार के दु:खों से छूट कर एक परान्तकाल तक आनन्द प्राप्त करने का यह स्वर्णिम अवसर है, इतने महान् सुख को पाने के लिए पूरा बचपन, पूरी जवानी लगानी होगी । धन-सम्पत्ति, सगे सम्बन्धि आदि तो करोड़ों बार बनाएं हैं, छोड़े हैं, बार-बार वही इतिहास दोहराना मूर्खता है ...... इस प्रकार ईश्वर ही मेरा सच्चा पिता, गुरु, आचार्य, राजा, न्यायाधीश, विधाता, स्वामी, सखा और रक्षक है। मेरे सब दु:ख दूर करने वाला वही है... इस प्रकार निरन्तर चिन्तन व तीव्र लग्न पैदा करने से चित्त की वृत्तियों का निरोध होता है, चित्त एकाग्र होता है ।

६. **मैत्री चतुष्ट्य**– चित्त को एकाग्र व प्रसन्न रखने के लिए आवश्यक है कि साधक लोक व्यवहार में यह नियम बना कर चले कि वह मैत्री, करुणा, मुदिता, उपेक्षा के सिद्धान्त का पालन करेगा और कभी निराश नहीं होगा । **मैत्री :** सुखी व्यक्तियों के साथ मित्रता, **करुणा :** दु:खी लोगों के प्रति दया कर यथा योग्य सहायता करना, **मुदिता :** धार्मिक विद्वान्, परोपकारी लोगों को देख कर प्रसन्न होना, **उपेक्षा :** पापियों के प्रति न राग न द्वेष अर्थात् उनकी उपेक्षा करना ।

७. **प्राणायाम (क) बाह्य प्राणायाम :**– शरीर में स्थित वायु को नासिका द्वार से निकालकर उसको सुखपूर्वक जितने काल तक बाहर ही रोका जा सके, उतने काल तक रोकें रखे, जब रोकना कठिन हो जाए तो धीरे-धीरे श्वास अंदर लें लें यह एक बाह्य प्राणायाम् हुआ । तीन से प्रारम्भ करके ग्यारह या इक्कीस तक करने का अभ्यास करें ।

(ख) आभ्यान्तर प्राणायाम :– श्वास को धीरे धीरे भीतर लें और जब तक भीतर रोक सकें रोकें, जब रोकना कठिन हो जाए तो धीरें-धीरें छोड़ दें । यह एक आभ्यान्तर प्राणायाम हुआ । ऐसे

(शेष पृष्ठ १३ पर)

सृष्टिसंवत् सत्तानव करोड़ वर्ष है

स्वामी ब्रह्मानन्द सरस्वती
आर्षगुरुकुल वड्लूरु, कामारेड्डि, (आ. प्र.) ५०३ १११

1 प्रश्न:- महर्षि दयानन्द ऋषि थे, आप्त पुरुष थे। उन की लिखी सृष्टि संवत् की संख्या मिथ्या नहीं हो सकती।

उत्तर:- ऋषि दयानन्द ऋषि थे, आप्त पुरुष थे। इस लिये उन्होंने सृष्टि संवत् की जो संख्या लिखी है वह चार हेतुओं के द्वारा सिद्ध की है। विना हेतु के नहीं। जिन हेतुओं के आधार पर उन्होंने सिद्ध किया है उन हेतुओं से आप सिद्ध कीजिये। ऋषि दयानन्द ने हेतुओं से सिद्ध किया है, प्रतिज्ञा मात्र से नहीं। आप उन से क्यों नहीं सिद्ध करते ?

मैं आप से प्रश्न करता हूँ कि महर्षि की लिखी सृष्टिसंवत् की संख्या में कौन कौन से हेतु दिये, बतलाइये?

कोई सृष्टि को, वेदों को छ: सहस्त्र वर्ष पूर्व उत्पन्न कहें तो आप का क्या उत्तर होगा?

2 प्रश्न:- ऋषि का लिखा सृष्टिसंवत् मिथ्या न होने का एक अन्यकारण यह है कि एक नहीं तीन स्थानों पर लिखा है। 1) ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, 2) सत्यार्थ प्रकाश, 3) मेला चान्दापुर।

उत्तर :- किसी प्रतिमा की सिद्धि में प्रतिज्ञा का अनेकवार, अनेकस्थानों पर लिखा जाना हेतु नहीं, हेत्वाभास है। महर्षि दयनन्द सरस्वती ने यह कहीं नहीं लिखा कि मेरा लिखा असत्य नहीं हो सकता। उन्होंने ही नहीं अन्य किसी ऋषि ने ऐसा नहीं लिखा। लिखा हो तो बतलाइये।

कृपया आप यह न समझें कि सत्तानव करोड़ तथा सन्धिकाल को मानने वालों की ऋषि दयानन्द के प्रति श्रद्धा आप से न्यून है, अथवा है ही नहीं, किं वा वे ऋषि दयानन्द के विरोधी हैं। ऋषि दयानन्द के प्रति भक्ति को जानने का नापतोल क्या है? आप के समान ऋषि दयानन्दभक्त अन्य भी हो सकता है।

छयानव करोड़ मानने वालों से मेरे प्रश्न:-

1 ऋषि दयानन्द द्वारा स्वीकृत सृष्टिसंवत् में क्या क्या हेतु है? क्यों कि हेतु के विना प्रतिज्ञा सिद्ध नहीं होगी।

2 आप की भक्ति ऋषि दयानन्द के प्रति है। मुझे इस पर कुछ नहीं कहना है। ऋषि दयानन्द के निम्न स्थल की संगति लगाकर बतलाईये। क्यों कि अपने को ऋषिभक्त कहने वाले किसी भी व्यक्ति ने ऋषि के निम्न वाक्यों की सङ्गति नहीं लगाई। यदि कोई इन वाक्यों को सदोष व अशुद्ध कहें तो आप क्या उत्तर देंगे? **''जो सूर्य को स्थिर कहते हैं वे भी ज्योतिर्विद्यावित् नहीं। क्यों कि यदि सूर्य न घूमता होता तो एक राशि से दूसरी राशि अर्थात् स्थान को प्राप्त न होता। और गुरु पदार्थ विना घूमे आकाश में नियत स्थान पर कभी नहीं रह सकता।''**

सत्यार्थ प्र., 8 समुल्लास।

आप इस मन्तव्य को सत्य मानते हैं वा असत्य? यदि सत्य मानते हैं तो सिद्ध कीजिये। नहीं तो इस को असत्य सिद्ध कीजिये।

छयानव करोड़ मानने वालों पर मेरा आक्षेप। यदि महर्षि के प्रति श्रद्धा है तो समाधान के लिये श्रम करें। समाधान करें। बचने का प्रयास न करें।

3 महर्षि ने वेदों की उत्पति को सहस्त्रों की संख्या में मानने वालों की बात का चार हेतुओं के द्वारा निरास किया और अपनी मान्यता वा सत्य को प्रतिज्ञा के रूप में प्रकट किया। वे केवल प्रतिज्ञा करने वाले न थे। प्रतिज्ञा की सिद्धि के लिये हेतु देते थे। उन के दिये हेतु नीचे हैं। वे हैं :

क) काश्मीर से कन्याकुमारी तक, अटक से कटक तक एक दूसरे से सर्वथा अपरिचित, समस्त आर्यावर्तवासी, लाखों वर्षों से एक समान **संकल्प** पढ़ते हैं। सङ्कल्प में सत्तानव ही है छयानव नहीं। यह सङ्कल्प स्वाभाविक रुप से हो रहा है कृत्रिम वा कल्पित नहीं है। इस में पढ़ा जाने वाला **संवत्** अरबों की संख्या में है। न कि सहस्त्रों की संख्या में।

ख) नष्ट ज्योतिष ग्रन्थों से बचे **ज्योतिष के समस्त ग्रन्थों में** विद्यमान **संवत्** भी सहस्त्रों की संख्या में नहीं किन्तु अरबों की संख्या में है। यह सत्तानव करोड़ है, छयानव नहीं। यह **संवत्** विज्ञान सम्मत है। कल्पना नहीं।

ग) **तिथिपत्रों** में लिखा जाने वाला **संवत्** सहस्त्रों की संख्या में नहीं अपितु अरबों की संख्या में है। यह सत्तानव करोड़ है छयानव नहीं। तिथिपत्रों की यह परम्परा अविच्छिन्न, अखण्डित है। अनादिकाल से कभी खण्डित नहीं हुवी।

घ) आर्यावर्त के पञ्चाङ्गो में लिखा जाने वाला **संवत्** सत्तानव करोड़ है, छयानव नहीं। इस की उपपत्ति= सिद्धि ज्योतिष ग्रन्थों में है।

इन चार हेतुओं के होते हुवे वेदों को तीन, चार सहस्त्र वर्ष पूर्व के किस प्रकार सिद्ध कर सकते हैं? यह तब ही सिद्ध होगा जब इन चार हेतुओं का खण्डन होगा। ऋषि दयानन्द के भक्त उन के द्वारा प्रदत्त चारों में से एक को भी हेतु नहीं मानते। किस को मानते हैं बतलावे? क्यों कि हेतु के विना प्रतिज्ञा सिद्ध नहीं होती।

छयावन करोड़ मानने वाले ऋषि दयानन्द के दिये इन हेतुओं को क्यों छोड़ देते हैं? क्या ऋषि दयानन्द के द्वारा स्वीकृत, वा प्रदत्त हेतु नहीं? ऋषि के किसी भक्त ने भी किसी हेतु के विषय में नहीं लिखा। सम्भव है इन हेतुओं को नहीं समझ पाये हों। क्यों कि ज्योतिष शास्त्र को पढ़े विना ये समझ में कभी नहीं आ सकते। ऋषि के शिष्यों ने वेदार्थबोधक ज्योतिष को दूर रखा।

4 जगत् की रचना में 6 चतुर्युग लगते हैं। क्या ऐसा किसी वेद में, शास्त्र में, ऋषि दयानन्द के साहित्य में है? यह तो अपने को ऋषिभक्त मानने वालों की अपनी स्वयं की कल्पना=(प्रतिज्ञा) है। छयानव करोड़ वाले अपनी कल्पना को ही प्रमाण मानते है।

5 जगत् की उत्पत्ति के जो वर्ष महर्षि ने माने हैं यह उन की प्रतिज्ञा है।

उन्होंने इस के लिये चार हेतु दिये। छयानव करोड़ वाले ऋषि की प्रतिज्ञा को ले रहे हैं और हेतुओं को छोड़ रहे हैं। क्यों? क्या हेतु के विना प्रतिज्ञा सिद्ध हो सकती है? कभी नहीं।

6 सन्धिकाल को न मानने वाले अपने पक्ष को पञ्चवयवों से सिद्ध करके बतलावें।

7 छयानव करोड वाले सन्धिकाल को छोडे देते है। इस में कोई भी प्रमाण नहीं। यदि कहें कि ''मनुस्मृति में न होने से नहीं मानते'' तो क्या मनुस्मृति में न होने से हमें नहीं मानना चाहिये ? क्या जो मनुस्मृति में न हो उस को न मानें ? यदि नहीं मानना चाहिये तो

(य) मन्वन्तरों की संज्ञाएं, (र) वेदों के मन्त्रों की संख्याएं, (ल) ज्वर की चिकित्साएं,

(व) बीजगणित, (श) पृथिवी 'की परिधि मनुस्मृति में नहीं है तो क्या इन को न माने?

(८) जगत् निर्माण में छः चतुर्युग लगते हैं ऐसा क्या मनुस्मृति में लिखा है? हो तो बतलाइये। न हो तो मानते क्यों हैं? आप का क्या सिद्धान्त है जो मनुस्मृति में सन्धि का कथन न होने के कारण सन्धि को तो नहीं मानते हैं और 6 मन्वन्तरों के सृष्टि के निर्माण में लगने की बात के न होने पर भी मानते हैं?

आप से प्रश्न है आप को उत्तर देना चाहिये कि क्या मनुस्मृतिकार ने तथा ऋषि दयानन्द ने सन्धिकाल का निरास किया है? किया हो तो बतलावें। न किया हो तो आप कैसे निरास करेंगे?

प्रश्नः- क्या मनुस्मृति ज्योतिष शास्त्र है जिस में ज्योतिष से सम्बद्ध सारी बाते हों?

प्रश्नः- क्या मनुस्मृति सब विद्याओं का भण्डार है जैसा वेद?

प्रश्नः- वेद समस्त विद्याओं का भण्डार है। तथापि सूर्य सिद्धान्त की, चरक की, सुश्रुत की, वैशेषिक की, वर्णोच्चारण की, नाट्य विद्या की सारी बातों को क्या कोई वेदों में ढूंढेगा? नहीं? उसी प्रकार क्या ज्योतिष की सूक्ष्म बातों को मनुस्मृति में ढूंढ सकते हैं? नहीं।

प्रश्नः- ऋषि दयानन्द सरस्वती ऋषि थे, आप्त, थे, योगी थे।

उत्तर : मैं ऋषि दयानन्द को ऐसा ही मानता हूँ। किन्तु मैं यह नहीं मानता कि जीव सर्वज्ञ होता है और महर्षि दयानन्द सर्वज्ञ थे। मैं यह भी मानता हूँ कि छयानव करोड मानने वाले ऋषि दयानन्द के शिष्य ऋषि दयानन्द द्वारा लिखित ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका में विद्यमान संकल्पवाक्य **''ओं तत्सत् श्री ब्रह्मणो द्वितीयप्रहरार्द्धे वैवस्वते मन्वन्तरेष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे अमुकसंवत्सरेयन तुर्ममासपक्षदिन नक्षत्रलग्नमुहूर्तेथेदं कृतं क्रियते च।''** के अर्थ को नहीं जानते। जानते हों तो इस में विद्यमान शब्द **''द्वितीयप्रहरार्द्धे''** का अर्थ क्या है सप्रमाण लिखें। ऋषि दयानन्द के शिष्य इस के अर्थ को क्यों नहीं जानने का प्रयत्न करते? मैं यह भी मानता हूँ कि ऋषि दयानन्द के शिष्य ज्योतिषशास्त्रों को, ज्योतिष की परिपाटी को, एवं परम्परा को नहीं जानते इस लिये छयानव करोड को मानते हैं। मैं यह मानता हूँ कि वे तिथिपत्र को नहीं जानते। मुझे यह भी मानना पडता है कि वे पञ्चाङ्गों को नहीं जानते। जगत् को उत्पन्न होकर कितने वर्ष हुवे इस संख्या को बतलाते हुवे महर्षि ने चार हेतु दिये हैं। ऋषि के शिष्य इन को जानते ही नहीं, तो सृष्टिसंवत् की सिद्धि किस प्रकार करेंगे ?

छयानव करोड वाले अपने को ऋषिदयानन्द के पक्के भक्त मानते हैं सत्तानव करोड वालों को भूल पर मानते हैं और उन को ऋषि दयानन्द के प्रतिकूल मानते हैं। किन्तु वे यह नहीं जान रहे हैं, न जानने के लिये है कि उन्होंने ऋषिदयानन्द के अनुयायियों में निराधार,ऋषिदयानन्दविरुद्ध, प्राचीन इतिहास विरुद्ध, ज्योतिष परम्परा के विरुद्ध छयानव करोड वर्ष **सृष्टिसंवत् चला कर** युगप्रवर्तक, ज्योतिषविद्या के अनुपम भण्डार ऋषिदयानन्द वा उन के भक्तों को ज्योतिर्विदों के समक्ष उपहास के पात्र बना रहे हैं। प्राचीन एवं सत्य इतिहास (संकल्प) को छोड रहे हैं, उस का निरास कर रहे हैं। मैं चाहता हूँ कि छयानव करोडवाले मेरे प्रश्नों का उत्तर देवें।

❀❀❀

(पृष्ठ ११ से.....)

तीन प्राणायाम करें।

(ग) स्तम्भवृत्ति प्राणायाम् : श्वास को जहां का तहां रोक देना, जब रोकना कठिन हो जाए तो छोड़ कर पुनः २-३ बार दोहराना।

(घ) बाह्य-आभ्यान्तर विषयाक्षेपी : - श्वास को वेग से बाहर फैंके और बाहर ही रोकें रखें, जब रोकना कठिन लगे तो पुनः धक्का देकर पेट को अन्दर सिकोड़ श्वास को बाहर ही रोके रखें। दो तीन बार ऐसा करने के उपरान्त श्वास भीतर ले लें और भीतर ही रोके रखें, बाहर निकलने लगे तो भी भीतर ही अधिक बल से रोकें रखें, इस प्रकार दो तीन बार करने के उपरान्त धीरे-धीरे छोड़ दें। ऐसे दो तीन प्राणायाम् करें।

सभी प्राणायाम क्रमशः तीन तीन किए जा सकते हैं। सभी करने कठिन लगें तो केवल बाह्य प्राणायाम समर्थ्यानुसार करें। ग्रीष्म ऋतु में कम मात्रा में करें और प्रारम्भ में किसी विशेषज्ञ से सीख कर करें।

८. **ईश्वर प्रणिधान :-** ईश्वर की दिव्य रचना व उसके बेजोड़ उपकारों का चिन्तन कर उसके प्रति विश्वास व प्रेम को दृढ़ करना, वह जिस हाल में रखे प्रसन्न रहना, प्रत्येक कार्य कर्त्तव्य समझकर व ईश्वर को साक्षी मानकर करना, ईश्वर के प्रति समर्पित होकर रहना, ईश्वर की प्रत्येक आज्ञा का पालन करना, जो हुआ अच्छा हुआ, जो हो रहा है अच्छा हो रहा है, जो होगा अच्छा होगा- सदैव ऐसे भाव बनाकर रंखना, अपनी क्रियाओं का लौकिक फल न चाहना ईश्वर प्रणिधान है। ईश्वर समर्पण व विश्वास के लिए मुख्यतः तीन साधन हैं- प्रत्यक्ष अर्थात् समाधि, अनुमान व शब्द प्रमाण, प्रारम्भिक अवस्था में अनुमान व शब्द प्रमाण से समर्पण हो सकता है। सब प्राणियों के साथ आत्मवत् व्यवहार करना, सब कुछ ईश्वर का मानकर प्रयोग करना भी ईश्वर प्रणिधान के अन्तर्गत आता है। ईश्वर प्राप्ति में यह सर्वाधिक उपयोगी सोपान है।

।। देवदयानन्द नीति-प्रीतिपूर्वक'यथायोग्य' व्यवहार ही सुख का आधार है ।।
पाक प्रिय मु. नेताओ की ठीक नीति, हिन्दद्रोही वोटलोभी नेताओं की गलत नीति
⁂ भारतवासियों के सुख का आधार, पाकिस्तान से यथा योग्य व्यवहार ⁂

('पाक'मात्र प्रीति-वार्ता, खेल, व्यापार बाढ़ में आर्थिक सहकार से नहीं सुधर सकता)

6418021091- आचार्य आर्यनरेश वैदिक गवेषक उद्गीथ स्थली हिमाचल

* फरमान कुरआन 9:123 अपने पड़ोसी काफिर (देशों) से शरयित हेतु कयामत तक जिहादी लड़ाई करो *

पाकिस्तान के न सुधरने का कारण 1947 के समय एक कांग्रेसी मुस्लिम की वह घोषणा जिसे या तो कांग्रेसी नेता जानते नहीं अथवा मुस्लिम वोट-लोभ के कारण उसे अनदेखा कर रहे हैं। वह रहस्य है मुहम्मद एफ. के. दुर्रानी कांग्रेसी का कथन जो उसकी अपनी पुस्तक द. मीनिंग ऑफ पॉकिस्तान में अंकित है। जब बहुत से मु. नेताओं ने एक छोटे से क्षेत्रफल वाले भाग को पाक मुस्लिम देश बनाए जाने पर कांग्रेसमें आज के सलमान खुर्शीद, शकील अहमद, मु. दलवी प्रवक्ता, गुलाम नबी आजाद, हामिद अंसारी उपराष्ट्रपति तथा सोनिया के विशेष सलाहकार मुहम्मद अहमद पटेल जो पाक द्वारा बार-बार जिहादी हमले करने पर भी वहां अपनी रिस्तेदारी बताकर उसे बचाने की गहरी साजिश कर रहे हैं'' ने कहा- ''आप दु:खी न हों हमने भारत के इस छोटे से भाग को मुस्लिम देश पाकिस्तान के रूप में इस लिए स्वीकार किया है कि यही प्रदेश आगे चल कर पूरे भारत पर इस्लामिक शासन करने हेतु जिहादी युद्ध के बेस कैम्प का कार्य करेगा। इसी प्रदेश से हमारे पूर्वज मुगलों का पूर्ण राज्य हमें प्राप्त होगा'' हामिद दलवई लिखित पुस्तक पॉलिटिक्स इन सैकुलरइण्डिया पृष्ठ 149 प्रमाण हेतु देखें। अकेला दुर्रानी नहीं अपितु कॉंग्रेस के लगभग सभी मुस्लिम नेताओं ने इसी लिए छोटे से भाग की मुसलमानों हेतु पाकिस्तान बनाने का इसी फूट नीति से विरोध नहीं किया था, जब कि सब की भावना पूर्ण भारत को इस्लामिक स्थान बनाने की थी।

तथाकथित महा सैकुलर वादी मुस्लिम नेता जिसने भारत को मुस्लिम स्थान बनाने हेतु अंग्रेजीं की सहायता से अपने अलिगढ़ मुस्लिम कालेज के प्रिंसिपल मि. वेक को कहा था कि हम अंग्रेजी के साथ तो रह सकते हैं परन्तु आर्य खालसाहिन्दुओं के साथ नहीं एवं न ही हम भारत को एक राष्ट्र मानने को तैयार हैं, क्योंकि मुसलमानों के विशाल समूह का अलग खान-पान (गोमांस) व भाषा (उर्दू) रहनसहन (चार विवाह अधिकबच्चे) इवादत (मक्का मदीना) गाय की बलि व हजवाला राष्ट्र है। अंग्रेजों के इशारे पर नाचने के कारण ही इस सैयद अहमद खान को 'सर' की उपाधि मिली थी। एडमिनिस्ट्रेशन एण्ड प्रोग्राम नाम की पुस्तक के पृष्ठ 500 पर सैयद कहता है- ''भारत से अंगेजो के चले जाने के पश्चात हम इसे हिन्दुओं को शासन करने हेतु नहीं देंगे क्योंकि यहां हमारे पूर्वजों मुगलों का 700 वर्ष शासन रहा है। भले ही हम भारत में हिन्दुओं से कम संख्या में हैं फिर भी हमें कमजोर न समझा जाए। यदि हमें आवश्यकता पड़ी तो हम पड़ोसी मुस्लिम देशों की सहायता लेंगे एवं दिल्ली से बंगाल तक खून की नदियां बहा देंगे। ''कॉंग्रेस का एक और तथा कथित मुस्लिम नेता मौलाना हुसेन जहमद मदनी (बृ.मु.म. म. पृ.6 व मुस्लिम राजनी चिन्तन पृष्ठ 45 के अनुसार) कहता है- ''इस छोटेसे पाकिस्तान प्रदेश के अलग होने से सम्पूर्ण भारत पर इस्लामी राज्य की स्थापना का उद्देश्य तो पूरा नहीं हुआ परन्तु हिन्दुस्तान की 'दारुल इस्लाम' बनाने की बहुत सी रुकावटें दूर हो जाएंगी। आज 2012 में हैदराबाद की मुस्लिमपार्टी 'के कॉंग्रेस सहयोगी एम. पी. का भाई ओवासी भी तो सर संयद व अहमद की भाषा बोल रहा है कि हमारे 25 करोड़ मु. 100 करोड़ हि. ला 15 मि.में कण्कर देंगे। कैम्ब्रेज हिस्ट्री ऑफ इण्डिया भाग 8 पृष्ठ 872 पर लिखा है कि कांग्रेस द्वारा मुस्लिमों की आवश्यकता से अधिक (आजकल के समान अधिक मांगे पूर्ण करने के कारण) कॉंग्रेसी-नेताओं भीतरी कमजोर नीति जानकर भारत का बटवारा हुआ''। आर्य वैदिक भारतीय नीति व मनु चाणक्य, विदुर व दयानन्द से महान नीति निपुण देश भक्तों का एक ही मत है कि शत्रु के समक्ष कमजोरी मत दिखाओ यदि वह बार-बार मैत्री के स्थानपर पाक के समान धोखा दे तो उस की ईंट से ईंट बजा दो यदि तुम एसा नहीं करोगे तो वह शक्ति पाकर व धीरे -धीरे देश में अपने लोगों द्वारा बगावत फैला कर तुम्हारे राष्ट्र को विनष्ट कर देगा। ऐसी ही मुस्लिम वोट नीति से विश्व के 260 देश मुसल मान बन कर कुर्बाने हुए हैं। यथा योग्य 'षठषाठयं समाचरेत' दयानन्द नीति ही भारत को बचा सकती है। अत: 370 व मुस्लिम लॉ समाप्त करो व अनु. 44 समान कानून लागू करोगे माने उनकी नागरिकता समाप्त करो।

❀❀❀

हम ऐश्वर्य की चोटी पर चढ़ जाएँ

आचार्य प्रियव्रत

भगभक्तस्य ते वयमुदशेम् तवावसा।
मूर्धानं राय आरभे ।।५।।

अर्थ- हे देव ! **(भगभक्तस्य)** भजनीय ऐश्वर्य के बाँटने-वाले **(ते)** आपके **(वयम्)** उपासक लोग हम **(तव)** आपकी **(अवसा)** रक्षा द्वारा **(रायः)** ऐश्वर्य की **(मूर्धानम्)** चोटी को **(उत्-अशेम)** उत्कृष्ट रीति से प्राप्त करें (जिससे कि हम लोग) **(आरभे)** आरम्भ करने योग्य कार्यों में (प्रवृत्त हो सकें।)

पिछले दो मन्त्रों में प्रभु के भजनीय ऐश्वर्य का वर्णन हो चुका है। तृतीय मन्त्र में कहा गया था कि प्रभु सब प्रकार वरण करने योग्य, चाहने योग्य, सुखदायक ऐश्वर्यों के स्वामी हैं। चतुर्थ मन्त्र में कहा गया था कि प्रभु का वह ऐश्वर्य सदा सर्वत्र प्रवाहित होता रहता है। सदा प्रवाहित होते रहने पर भी यदि वह ऐश्वर्य हमें प्राप्त नहीं होता तो इसका कारण हमारा ही अपना दोष और पाप है। प्रस्तुत मन्त्र में प्रभु के उसी भजनीय ऐश्वर्य को प्रकारान्तर से वर्णित किया गया है।

मन्त्र में भगवान् का एक विशेषण दिया गया है- भग-भक्त। भगभक्त का अर्थ होता है भग अर्थात् भजन करने योग्य, सेवन करने योग्य, सुखदायक, ऐश्वर्य को विभक्त करनेवाला- बाँटनेवाला । भगवान् सेवन करने योग्य ऐश्वर्य के विभक्ता हैं। अपने ऐश्वर्य को वे सबमें विभक्त करते रहते हैं। वे अपने ऐश्वर्य से किसी को वञ्चित नहीं रहने देते। क्षुद्र-से-क्षुद्र और बड़े-से-बड़े प्राणी को- सबको प्रभु का ऐश्वर्य यथायोग्य रूप में निरन्तर मिल रहा है। पापियों को भी वह मिल रहा है। उससे कोई भी वञ्चित नहीं है तभी तो हम सब प्राणी अपना-अपना जीवन धारण कर रहे हैं और जीवन में न्यूनाधिक सुख प्राप्त कर रहे हैं। जिस क्षण में प्रभु हमें अपने ऐश्वर्य से पूर्णरूप में वञ्चित करने का निश्चय कर लेते हैं उसके आगे तो हमारा जीवन ही नहीं रह पाता- हमें मृत्यु के मुख में चला जाना पड़ता है। भगवान् का ऐश्वर्य यथायोग्य रूप में सबको बँट रहा है।

मन्त्र में कहा गया है कि ''ऐश्वर्य के बाँटनेवाले हे देव ! आपके उपासक हम लोग आपकी रक्षा द्वारा ऐश्वर्य की चोटी को प्राप्त करें।'' इस मन्त्र-वाक्य के ''आपके उपासक हम लोग''- ''ते वयम्''- इन शब्दों को ध्यान से देखना चाहिए। भगवान् के ऐश्वर्य की चोटी किन्हें प्राप्त होती है, उनका ऐश्वर्य पूर्णरूप से किन्हें प्राप्त होता है? उनको जो भगवान् से कह सकते हैं कि ''ते वयम्''- हम आपके हैं। जिनकी चित्तवृत्ति सदा भगवान् में लगी रहती है, ज़ो सदा भगवान् को स्मरण रखते हैं, भगवान् का रूप जिनके मन की आँखों के आगे सदा रहता है, इसलिए जो भगवान् के गुणों से आकृष्ट होकर उन्हें अपनी चरित्र में धारण करते रहते हैं और इस प्रकार जो भगवान् के अपने बन जाते हैं उन्हें भगवान् का ऐश्वर्य पूर्णरूप में प्राप्त होता है। हमें जो बहुत बार दुःख में दब जाना पड़ता है, हमसे जो सुख-आनन्द बहुत बार दूर भाग गया-सा दीख पड़ता है, हमें जो प्रभु का ऐश्वर्य मिलना कम हो जाता है उसका कारण यह होता है कि हम प्रभु के नहीं रहते, हम प्रभु से दूर चले जाते है, हमारा चरित्र प्रभु-गुणों से विरहित होकर पापमय बन जाता है। जब तक हम प्रभु के रहते है, प्रभु के सत्य, न्याय, दया, ज्ञान, बल आदि गुणों का समावेश जब तक हममें रहता है तब तक हमें प्रभु का ऐश्वर्य निरन्तर प्राप्त होता रहता है। ज्यों-ज्यों हम प्रभु से परे हटते जाते हैं, त्यों-त्यों हमसे ऐश्वर्य छिनने लगता है और हमारा दुःख संकट बढ़ जाता है।

मन्त्र में कहा गया है कि ''आपसे हम आपकी रक्षा द्वारा ऐश्वर्य की चोटी को प्राप्त करें।'' इसका भाव तो स्पष्ट ही है। जो प्रभु के बनकर रहते हैं उन्हें प्रभु की रक्षा प्राप्त होती है और उस रक्षा में रहकर वे खूब उन्नति करते हैं, उन्हें खूब ऐश्वर्य प्राप्त होता है। जिन्हें भगवान् की रक्षा प्राप्त हो जाती है वे ऐश्वर्य की चोटी पर चढ़ जाते हैं। उनके ऐश्वर्य में कहीं से किसी प्रकार की भी कोई कमी नहीं रहती। वे पूर्ण ऐश्वर्य के अधिपति हो जाते हैं- उनके आनन्द-मङ्गल में पराकाष्ठा की पूर्णता होती है।

मन्त्र में प्राप्त करने के लिए 'उदशेम' क्रिया आई है। इसमें 'उत्' उपसर्ग है। इसे एक प्रकार का क्रियाविशेषण समझना चाहिए। इस उपसर्ग का अर्थ है- 'उत्कृष्ट रीति से।' हम जो ऐश्वर्य प्राप्त करें वह उत्कृष्ट रीति से प्राप्त किया जाना चाहिए। उसकी प्राप्ति में हमें किसी प्रकार का छल-छिद्र नहीं करना चाहिए। पवित्र उपायों से हमें ऐश्वर्य प्राप्त करना चाहिए। प्रभु के बन्दों को जिस तरह चलकर ऐश्वर्य कमाना चाहिए उस तरह चलकर हमें ऐश्वर्य कमाना चाहिए। क्रिया के 'उत्' उपसर्ग का यही ध्वनितार्थ है।

'अशेम' क्रिया का अर्थ हमने 'प्राप्त करें' ऐसा किया है। इसका शब्दार्थ है 'व्याप्त हों।' हम प्रभु की कृपा से ऐश्वर्य की चोटी में, ऐश्वर्य की प्रचुरता में, व्याप्त हों। हम ऐश्वर्य में घुस जाएँ। प्रभु की रक्षा के साथ इस क्रिया के प्रयोग की यह ध्वनि है कि जिन्हें भगवान् की रक्षा प्राप्त हो जाती है कि वे ऐश्वर्य में घुस जाते हैं और उस ऐश्वर्य से जनित आनन्द में डूबे रहते हैं।

मन्त्र में ऐश्वर्य का एक नाम **'रै'** आया है। मन्त्र का पद 'रायः' 'रै' का ही षष्ठीविभक्ति का एकवचन है। यह शब्द 'रा' धातु से बनता है। इस धातु का अर्थ दान करना होता है। जो दान किया जाए वह ऐश्वर्य है। 'रै' के इस धात्वर्थ से यह ध्वनित होता है कि हमें ऐश्वर्य का ग्रहण दान करने के लिए करना चाहिए। हमारे पास जितने प्रकार का भी ऐश्वर्य हो, हमें उसे औरों को देते रहना चाहिए। हमें अपनी शारीरिक शक्ति, मानसिक शक्ति, आत्मिक शक्ति और प्राकृतिक पदार्थों के संग्रह की शक्ति-सब प्रकार के ऐश्वर्य की शक्ति दूसरों के कल्याण में लगानी चाहिए। जिस प्रकार भगवान् भगभक्त हैं, ऐश्वर्य को बाँटनेवाले हैं उसी प्रकार हमें भी भगभक्त होना चाहिए। इसी में हमारे ऐश्वर्य की सार्थकता है। प्रभु के भक्त को प्रभु-सा ही होना चाहिए।

ऐश्वर्य किसलिए प्राप्त किया जाता है? ऐश्वर्य के नाम 'रै' से जो बात सूचित की गई है उसी को मन्त्र में प्रकारान्त से स्पष्ट शब्दों में कह दिया गया है। भगवान् से प्रार्थना है कि ''हम आपकी रक्षा द्वारा ऐश्वर्य की चोटी को प्राप्त करें, जिससे हम आरम्भ करने योग्य कार्यों में प्रवृत्त हो सकें।'' ऐश्वर्य की प्राप्ति का प्रयोजन है आरम्भ करने योग्य उत्तम कार्यों को करना । जिन कार्यों को करने से अपने भले के साथ-साथ औरों का भला भी होता है वे उत्तम कार्य हैं और उन्हीं को हमें करना चाहिए। इस प्रकार हमें अपना सब प्रकार का ऐश्वर्य लोकोपकार के, लोगों की भलाई के कार्यों में लगाना चाहिए तभी हमारे ऐश्वर्य की चरितार्थता है, तभी हमारे 'रै' में 'रै' पन आता है।

हे मेरे आत्मन् ! तू भी अपने को भगवान् का बना ले, फिर तुझे उनकी रक्षा प्राप्त हो जाएगी। उस रक्षा में रहते हुए तुझे पूर्ण ऐश्वर्य प्राप्त होंगे। तेरे सारे दारिद्र्य कट जाएंगे। तेरे अपने ही दारिद्र्य नहीं कट जाएँगे, तू औरों के भी दुःख-द्रारिद्र्य काटनेवाला बन जाएगा।

❀❀❀

नूतन निष्काम पत्रिका वर्ष-४ अंक-६ मुम्बई जून- २०१३ || पृष्ठ-०१६ || मूल्य- रु. ९/-

जेष्ठ २०७० (जून २०१३) Post Date : 25-4-2012 MH/MR/N/136/MBI/-10-12 MAHRIL 06007/13/1/2009-TC पोष्ट आफिस : सांताक्रुज़ (प.)

आर्य समाज सान्ताक्रुज मुम्बई का मुखपत्र

संपादक : संगीत आर्य

मुद्रक एवं प्रकाशक : चन्द्रपाल गुप्त द्वारा कृष्ण प्रिंटींग प्रेस, २६, मंगलदास रोड, मुंबई-२. से मुद्रित कराकर आर्य समाज भवन, वी. पी. रोड, (लिंकिंग रोड़), सान्ताक्रुज़ (प.) मुंबई-४०० ०५४. से प्रकाशित किया। दूरभाष : २६६० २८०० / २६६०२०७५ / २२९३१५१८

प्रति

मोटापे पर नियन्त्रण के उपाय-

ऊपर हम ने मोटापे के जो कारण दिये हैं यदि वे कारण दूर कर दिये जायं तो मोटापा स्वत: ही खत्म हो सकता है। यहां हम मोटापे पर नियन्त्रण के कुछ उपायों का वर्णन कर रहे हैं।

(१) भोजन पर विशेष ध्यान देना और उतनी कैलोरी युक्त भोजन ही लेना जितना शारिरिक श्रम किया जा रहा हो।

(२) समय समय पर व्रत या उपवास करना और उस दौरान केवल पानी या नांबू पानी ही लेना।

(३) भोजन में घी, तेल, खाद्यान्नों का कम उपयोग तथा मौसमी फलों व मौसमी सब्जियों का अधिकाधिक उपयोग।

(४) पर्याप्त शारीरिक श्रम अथवा व्यायाम आवश्यक है।

(५) कभी-कभी मालिश और धूप-स्नान का प्रयोग करना चाहिए।

(६) सदैव घर में बने भोजन को वरीयता देनी चाहिए। होटल, फास्ट फूड, चाट पकौड़ी, तले हुए भोजन से परहेज करना चाहिए।

(७) ठण्डे पेय, चाय, काफी, आइसक्रीम में कैलोरी अधिक होने के कारण इन का कभी कभी ही और सीमित मात्रा में ही उपयोग होना चाहिए। इन के स्थान पर फलों का रस लेना हमेशा अच्छा रहेगा।

हृदय-रोग

आधुनिकता के जितने भी दुष्परिणाम हैं उन में हृदय-रोग प्रमुख है। हमारे देश में पूरे वर्ष भर में करीब सोलह हजार लोग हृदय रोगों के कारण मर जाते हैं जिन में बारह हजार की मौत अस्पताल पहुंचने के पहले ही हो जाती है। अकेले दिल्ली में ही दो लाख पचास हजार लोग हृदय-रोगों से पीड़ित हैं। देश भर में करीब ३० लाख रोगी हैं।

हृदय-रोगों में प्रमुख है दिल का दौरा। आइये जानें यह कब और क्यों पड़ता है?

दिल का दौरा कब और क्यों?

हमारे शरीर में हर अंग को जिन्दा रहने के लिए आक्सीजन और पोषण तत्त्वों की आवश्यकता होती है। ये चीजें हर अंग तक रक्त द्वारा पहुंचती हैं। इन पोषक तत्त्वों युक्त ताजा खून हृदय में पहुंचाने का काम दो धमनियां करती हैं जिन्हें ''कोरोनरी'' कहते हैं। कम आयु में ये धमनियां नरम और लचीली होती हैं। इन का स्तर सपाट और चिकना होता है तथा धमनियों के अन्दर की भीतरी खोखली जगह खुली और चौड़ी होती है। जिस से रक्त अबाध गति से दौड़ता है। उम्र बढ़ने के साथ-साथ तथा खान-पान रहन-सहन ठीक न होने के कारण ये धमनियां सख्त हो जाती हैं। इनकी दीवारें मोटी हो जाती हैं तथा सफेद खुरदुरे चकत्ते पड़ जाते हैं। नली की भीतरी जगह संकरी होने लगती है। ऐसा वहां लगातार वसा के जमाव के कारण होता है। जब रक्त-प्रवाह का यह रास्ता काफी तंग हो जाता है तब भीतर दीवार के किसी चकत्ते पर रक्त जमने लगता है और थक्के की शक्ल ले लेता है। अगर यह थक्का इतना बड़ा हो जाय कि रक्त के प्रवाह को एकदम रोक दे तो हृदय के उस भाग को ताजा रक्त मिलना बन्द हो जायेगा। जिस से वह अंग निष्क्रिय हो जायेगा। यही अवस्था दिल का दौरा कहलाती है।

दिल के दौरे का सब से बड़ा लक्षण है हृदय मांसपेशी का दर्द। यह दर्द आमतौर पर सीने की हड्डी के पीछे या सीने के बायीं तरफ महसूस होता है और बायें हाथ, पीठ और जबड़े तक फैल सकता है। इस से भीतर ही भीतर ऐंठन और सिकुड़न सी महसूस होती है और ठण्डा पसीना छूटने लगता है। यदि समय पर चिकित्सकीय सुविधा उपलब्ध न हो तो रोगी की मृत्यु भी हो जाती है।

असन्तुलित आहार और मोटापा दिल के दौरे का एक प्रमुख कारण है। आहार में अधिक वसा होने पर रक्त में कोलेस्ट्राल नामक पदार्थ बढ़ जाता है। जिस से कोरोनरी धमनियों की दीवारें सख्त हो जाती हैं। मोटे लोगों में हृदय को अधिक रक्त पम्प करना पड़ता है। इसलिए भी उस पर अधिक भार पड़ता है। मधुमेह तथा आरामतलब लोगों को दिल के दौरे ज्यादा पड़ते हैं। मानसिक अशान्ति तथा असाधारण चिन्ता भी दिल के दौरे को नियन्त्रित करती है।

खानपान और रहन सहन का ध्यान रखकर हृदय- रोगों से बचा जा सकता है। इसलिए जरूरी है कि शुरू से ही संतुलित भोजन करें। ३५ वर्ष से अधिक आयु होने पर घी, मक्खन, तेल व अधिक दूध का सेवन बन्द कर दें या कम कर दें। प्रतिदिन आधा घण्टा टहलना हृदय का अच्छा व्यायाम है। तनाव रहित व हंसी खुशी का जीवन बिताने से हृदय-रोगों से बचा जा सकता है।

आधुनिक जीवन और स्वास्थ्य से साभार